# ब्रज के पर्वोत्सव

( एक सर्वेक्षण )

वृन्दावन शोध संस्थान
रमणरेती मार्ग, वृन्दावन-२८११२१

# ब्रज के पर्वोत्सव

( एक सर्वेक्षण )

(संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के अनुदान से सम्पन्न
सर्वेक्षण योजना आख्या)

*सम्पादक*

**डॉ॰ राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल**

निदेशक – संगीत शोध संस्थान, मथुरा

*सर्वेक्षक*

**श्रीमती वेणु शर्मा**

**वृन्दावन शोध संस्थान, वृन्दावन**

प्रकाशक :

**वृन्दावन शोध संस्थान**

रमणरेती, वृन्दावन

Phone : 91-565-2540628, 9359366166, Fax : 0565-2540576
Website : www.vri.org.in
Emil : vrindavanresearch@gmail.com

© सर्वाधिकार सुरक्षित

पुस्तक में प्रकाशित सामग्री बिना प्रकाशक/लेखक की लिखित अनुमति के किसी भी माध्यम द्वारा नहीं ली जा सकेगी।

संस्करण - प्रथम

वर्ष 2016-17

मूल्य : 150/.

चित्र संयोजन - उमाशंकर पुरोहित

मुद्रक : यमुना सिंडिकेट, मथुरा
9456684421
email : ys9456684421@gmail.com

# आमुख

ब्रज के पर्वोत्सव पर केन्द्रित यह कार्य पाठकों को समर्पित करते हुए हमें सन्तुष्टि का अनुभव हो रहा है। ब्रज मण्डल 84 कोस के क्षेत्र में फैला हुआ भारतवर्ष का एक प्रमुख तीर्थस्थल है, जिसमें विभिन्न वैष्णव मतों से सम्बन्धित अनेक देवालय स्थित हैं। सभी वैष्णव सम्प्रदायों की अपनी अलग मान्यताएँ तथा दर्शन हैं। इन मान्यताओं के अनुरूप ही इन मन्दिरों के सेवा-पूजा के विधान हैं साथ ही पूरे वर्ष भर यहाँ निरन्तर विभिन्न आयोजन, उत्सव, मेले आदि चलते रहते हैं। वस्तुत: ब्रज की संस्कृति भावनात्मक संस्कृति है और भक्तजन अपनी भावनाओं से देव-विग्रहों की पूजा ठाकुर विग्रहों को अपना आत्मीय मानकर करते हैं। जहाँ गर्मियों में उन्हें ग्रीष्म के ताप से बचाने हेतु शीतलता प्रदान करने के लिए फूल बंगलों में विराजमान कर शीतलता प्रदान करने वाले भोग अर्पण किये जाते हैं, वहीं शीतकाल में गर्म शैया, ऊनी वस्त्र आदि धारण कराकर गरम पदार्थों का भोग लगाया जाता है। वर्षा के मौसम में झूलों के आयोजन हों या होली पर रंग और गुलाल, सभी में ब्रज संस्कृति की अपनी विशिष्टताओं का परिदर्शन किया जा सकता है। इसी प्रकार समयानुकूल अनेक मेले आदि भी ब्रज की इस मन्दिर संस्कृति के अंग हैं।

प्रस्तुत पुस्तक वास्तव में वृन्दावन शोध संस्थान की शोध सर्वेक्षण योजना के अन्तर्गत सम्पन्न सर्वेक्षण कार्य की आख्या मात्र है। हमने पूरा प्रयास किया है कि ब्रज क्षेत्र के पर्वोत्सवों को इसमें समाहित किया जाय, फिर भी अनेक त्रुटियाँ इसमें हो सकती हैं। सुधी पाठक अपने सुझाव हमें अवश्य देंगे जिससे आगे इसकी क्षतिपूर्ति की जा सके। यह सर्वेक्षण कार्य श्रीमती वेणु शर्मा के द्वारा किया गया है। डॉ॰ राजेन्द्र कृष्ण अग्रवाल ने इसका सम्पादन तथा श्री दीनदयाल शर्मा ने इसमें प्रूफ संशोधन का कार्य मनोयोग से किया है। हम इनके आभारी हैं। संस्थान के डॉ॰ ब्रजभूषण चतुर्वेदी, डॉ॰ राजेश शर्मा, उमाशंकर पुरोहित और कृष्ण कुमार मिश्रा आदि ने इसमें जो सहयोग किया, उसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

विश्वास है पाठकगणों के लिए यह कार्य लाभदायी होगा।

**सतीशचन्द्र दीक्षित**
निदेशक
वृन्दावन शोध संस्थान, वृन्दावन

# अनुक्रमणिका

## चैत्र


- नव सम्वत्सर प्रतिपदा .... .... 07
- श्री यमुना छठ .... .... 09
- श्री राम जन्मोत्सव (राम नवमी) .... 09
- श्री हनुमान जयन्ती .... .... 11
- शीतला अष्टमी (बासौड़ा) .... .... 12
- बरूथनी एकादशी एवं वल्लभाचार्य जयन्ती .... 12


## वैशाख


- अक्षय तृतीया .... .... 13
- श्री नृसिंह जयंती (नृसिंह चतुर्दशी) .... 15
- वैशाखी पूर्णिमा .... .... 19
- वन विहार .... .... 19


## ज्येष्ठ


- जल विहार .... .... 20
- गंगा दशहरा .... .... 21
- स्नान यात्रा .... .... 22


## आषाढ़


- रथ यात्रा .... .... 24
- गुरु पूर्णिमा (व्यास पूर्णिमा).... .... 26


## श्रावण


- हरियाली अमावस्या .... .... 27
- हरियाली तीज .... .... 28

- पवित्रा एकादशी .... .... 30
- रक्षाबंधन .... .... 31

भाद्रपद

- श्रीकृष्ण जन्माष्टमी .... .... 32
- नन्दोत्सव .... .... 35
- गणेश चौथ .... .... 35
- बलदेव छठ .... .... 36
- राधाष्टमी .... .... 37
- वामन लीला .... .... 38
- मटुकी लीला .... .... 39
- अनन्त चौदस .... .... 39

आश्विन

- साँझी उत्सव .... .... 40
- शारदीय नवरात्र उत्सव .... .... 42
- दशहरा (विजय दशमी) .... .... 44
- शरद पूर्णिमा .... .... 45

कार्तिक

- अहोई अष्टमी .... .... 47
- धन तेरस .... .... 48
- नरक चौदस (छोटी दीपावली) रूप चौदस .... 48
- दीपावली (लक्ष्मी पूजन) .... .... 50
- गोवर्धन पूजा व अन्नकूट .... .... 52
- गोपाष्टमी .... .... 56
- अक्षय नवमी .... .... 57
- देवोत्थान एकादशी .... .... 59

- कार्तिक पूर्णिमा .... .... 60
- कार्तिक नियम सेवा .... .... 62

मार्गशीर्ष

- विहार पंचमी .... .... 63
- व्यंजन द्वादशी .... .... 65

पौष

- खिचड़ी उत्सव .... .... 66
- मकर संक्रान्ति .... .... 68

माघ

- सकट चौथ .... .... 70
- मौनी अमावस्या .... .... 70
- बसंत पंचमी (होलिकोत्सव का प्रारंभ) .... 71

फाल्गुन

- महाशिवरात्रि पर्व .... .... 76
- फुलैरा दौज .... .... 79
- बरसाने की होली .... .... 79
- नन्दगांव की होली .... .... 82
- रंगभरनी एकादशी .... .... 83
- होलिका दहन (होलिकोत्सव) .... 85

चैत्र कृष्ण पक्ष

- डोलोत्सव (धुलैंडी) .... .... 86
- दाऊजी की होली .... .... 88
- वृन्दावन के रंगजी मंदिर का ब्रह्मोत्सव (रथ का मेला) .... .... 91

# नव-सम्वत्सर प्रतिपदा

चैत्र शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को विक्रमी सम्वत् का शुभारम्भ होता है। इस दिन ब्रज के मन्दिरों में ठाकुरजी के विशिष्ट दर्शन होते हैं। अनेक व्यापारी अपने पुराने बही-खातों को बदलकर नये खाते आरंभ करते हैं।

इस दिन ब्रज के मन्दिरों में विशेष उत्सव मनाये जाते हैं। लोग मिश्री तथा नीम की नई कोपलें प्रसाद में वितरण करते हैं। ब्रजवासी लोग यमुनाजी में या अपने-अपने समीपस्थ जलाशयों, कुण्ड, सरोवरों में स्नान कर अपने को धन्य समझते हैं। स्मरणीय है कि भारतीय पंचांग में विक्रमी वर्ष का जनमानस में विशेष महत्व है। यहाँ भारतीय तिथिपत्र के अनुसार ही सभी मांगलिक कार्य सम्पन्न किये जाते हैं। इस दिन मन्दिरों में ठाकुर जी को नई पोशाक धारण कराई जाती है तथा ठाकुरजी के समक्ष पंचांग पढ़ी जाती है। भगवान को पंचांग सुनाई जाती है। इस दिन ठाकुर जी को विशेष व्यंजनों का भोग लगाया जाता है। जैसे— माखन-मिश्री, नीम-मिश्री, मौसम के फल, शर्बत इत्यादि। उत्तर भारत में आज ही के दिन से वासन्तिक नवरात्र का प्रारम्भ माना जाता है।

नव सम्वत्सर के दिन मन्दिरों में थापे भी रखे जाते हैं। मन्दिर को विशेष तरह से सजाया जाता है। विद्युत रोशनी फूल, केले के पत्ते व तना, आम के पत्ते, झूमर आदि सामानों से मन्दिर को दुल्हन की तरह सजाया जाता है तथा शाम के समय भक्तगण सुन्दर सज्जा तथा ठाकुरजी के दर्शनों का आनन्द लेते हैं। ठाकुर की पूजा की जाती है। इसमें मुख्यतया ब्रह्माजी का और उनके द्वारा निर्मित सृष्टि के प्रधान देवी-देवताओं, यक्ष, राक्षस, गंधर्वों, ऋषि-मुनियों, मनुष्यों, नदियों, पर्वतों, पशु-पक्षियों और कीटाणुओं का ही नहीं रोगों और उनके उपचारों तक का पूजन होता है। इससे संवत्सर की विशेष मान्यता स्पष्ट होती है। 'स्मृतिसार' में संवत्सर की व्याख्या करते हुए कहा है कि संवत्सर उसे कहते हैं जिसमें मासादि भली-भाँति निवास करते हैं।

***स च संवत्सरः सम्यक् वसन्त्यास्मिन मासादयः।***

संवत्सर-पूजन के समय नवीन पंचांग से वर्ष के राजा, मंत्री, संवत्सर निवास आदि के फल को सुनकर निवास-स्थान को ध्वजा, पताका, तोरण और वन्दनवार

आदि से सुशोभित करते हैं तथा संवत्सराय नमः, चैत्राय नमः, वसन्ताय नमः आदि नाम मन्त्रों से पूजन किया जाता है।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा वर्ष की प्रथम तिथि है। कहते हैं— इसी तिथि को ब्रह्मा ने सृष्टि-रचना का शुभारम्भ किया था। इस तिथि को भारतीय काल गणना यानि पंचांग का प्रारंभ माना जाता है। वर्ष आरम्भ की तिथि मंगल-कल्याण और सुख-वैभव का प्रतीक है। यह प्रतिपदा जिस ग्रह के दिन पड़ती है, उस वर्ष का वही राजा होता है।

नव वर्ष के नव दिवस की प्रतिपदा को भगवान ब्रह्मा की सांगोपांग पूजा होती है। साथ-साथ काल देवता, ग्राम देवता, अन्न देवता, ऋषि मुनि, देव पुरुष, सर-सरिता, कुंभ, तालाब, पर्वत और स्तंभ आदि की भी पूजा होती है। सजे हुये मंडप में कलश-स्थापना, ध्वजारोहण के बाद फूल-पत्र, भोग-नैवेद्य चढ़ाया जाता है। इस दिन को चैत्र संक्रान्ति भी कहते हैं।

इस पर्व के अन्तर्गत ही नारदजी से सम्बन्धित एक कथा भी भी प्रचलित है जिसमें नारद के हृदय में विवाह की जिज्ञासा होने पर श्रीविष्णु के द्वारा उन्हें पुनः भगवद्भक्ति की ओर प्रेरित करने का विवरण मिलता है।

चैत्र प्रतिपदा से ही नवरात्र भी प्रारम्भ हो जाते हैं। इन दिनों में दुर्गा के नौ रूपों की पूजा के साथ-साथ कन्या-पूजन का भी बड़ा महत्त्व होता है। प्रतिपदा के दिन ही घट-स्थापना के साथ जौ भी भक्तों द्वारा बोए जाते हैं। इन दिनों में देवी-गीतों का घर-घर में गायन किया जाता है। दुर्गा सप्तशती का पाठ भी किया जाता है। अष्टमी और नवमी के दिन अपने-अपने परिवारों की परम्परानुसार लोग कन्या-लाँगुरा पूजन करते हैं। हलुआ-पूड़ी, हलुआ-चना खिलाकर कन्या-लाँगुरों से आशीर्वाद लिया जाता है। देवी-मंदिरों में बँगले सजाये जाते हैं।

ब्रज में समस्त देवी मन्दिरों में नवरात्र के दौरान विशेष पूजा अर्चना की जाती है। मथुरा में चर्चिका, महाविद्या, वृन्दावन में कात्यायनी, चामुण्डा, योग माया देवी आदि समस्त मन्दिरों में भक्तों श्रद्धालुओं का समूह उमड़ता है, मेले का वातावरण सा रहता है।

## श्री यमुना छठ

शुक्ल पक्ष की छठ को कृष्णप्रिया कालिन्दी का जन्मोत्सव बड़ी धूमधाम से श्रद्धा-भक्ति से उत्साह के साथ मनाते हैं। औरों के लिये तो यमुना एक नदी है, पर ब्रजवासियों के लिये यह उनकी प्राणाधार हैं। श्रीकृष्ण की पटरानियों में इन्हें चौथा स्थान प्राप्त है। श्रीकृष्ण की सोलह हजार एक सौ आठ पटरानियों में ये ही एक ऐसी प्रिय श्रीकृष्ण की पटरानी हैं जिनकी ब्रज में बड़े आदर और श्रद्धा के संग पूजा-आराधना होती है। कलिन्द पर्वत से निकलने के कारण इनका नाम कालिन्दी पड़ा है।

यमुना नदी रूप का महत्व जो ब्रज के वृन्दावन और मथुरा में है वह और कहीं नहीं है। यमुना वृन्दावन को कंगनाकार रूप में घेरे हुए है। यमुना जी के संग यमराज का मन्दिर मथुरा के विश्राम घाट पर है। यहाँ पर कार्तिक में यम द्वितीया के दिन स्नान का विशेष माहात्म्य है। इस वैष्णव सम्प्रदाय से सम्बद्ध देवालयों में श्रीविग्रह के समक्ष यमुना जल की झारी (रजत, ताम्र एवं रज से निर्मित करुआ की आकृति का पात्र) रखी जाती है तथा इसे जमुना जी कहकर ही सम्बोधित किया जाता है। अष्टछाप के रचनाकारों ने इस बात का उल्लेख स्वकाव्य में किया है।

## श्री राम जन्मोत्सव (रामनवमी)

ब्रज संस्कृति राधा-कृष्ण की लीलाओं से परिपूर्ण है। मान्यता के अनुसार इसकी अभिव्यक्ति प्रख्यात रामभक्त गो॰ तुलसीदास जी के द्वारा भी की जा चुकी है। प्रसंग के अनुसार जब गोस्वामी जी अपने भाई नन्ददास (अष्टछाप के प्रसिद्ध कवि) से मिलने के क्रम में ब्रजयात्रा के दौरान वृन्दावन आये तो उनकी अभिव्यक्ति के रूप में यहाँ एक दोहा आज भी प्रचलित है—

*तुलसी या ब्रजभूमि में कहा राम सौ बैर।*
*राधे-राधे रटत हैं तरु-ढाक और कैर॥*

जिसकी परिणति में गोस्वामी जी को श्रीकृष्ण ने राम जी के रूप में दर्शन दिये। कृष्ण की इस लीला भूमि पर राम भक्ति की परम्परा के रूप में लिखित

प्राचीन पाण्डुलिपियाँ भी दृष्टिगोचर होती हैं। राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रख्यात रचनाकार चाचा श्रीहित वृन्दावन दास रचित राम बधाई के पदों की प्राचीन पोथियाँ इस कथन की पुष्टि करती हैं।

मथुरा के छत्ता बाजार स्थित रामजीद्वारा के राम-मन्दिर के संबंध में भी ऐसी ही मान्यता है—कहा जाता है कि "एक बार गो0 तुलसीदास यहाँ भगवान कृष्ण के दर्शन करने आये और उन्हें मुरली, मुकुट धारण किये हुए देखा किन्तु तुलसीदास तो थे राम के उपासक, अतएव कृष्ण को सिर कैसे नवा सकते थे? अत: तुलसी दास यह दोहा कहने लगे—

*कहा कहौं छवि आज की, भले बने हो नाथ।*
*तुलसी मस्तक नवत है, धनुष बाण लेउ हाथ।।*

कहते हैं भगवान कृष्ण ने राम रूप होकर गुसाईं जी को दर्शन दिये। दर्शन पाकर गोस्वामी जी गद्‌गद् हो गये और यह दोहा कहा—

*मुरली मुकुट दुराय कै, धनुष बाण लियौ हाथ।*
*तुलसी जन के कारने, कृष्ण भये रघुनाथ।।*

तब से यहाँ पर राम मन्दिर स्थापित है और राम नवमी का मेला तब से ही यहाँ लगने लगा। पुस्तक के सम्पादक का यह सौभाग्य रहा है कि न केवल उसका जन्म भी इसी मोहल्ले में हुआ है, बल्कि कुछ वर्ष मन्दिर प्रांगण में भी रहने का सुअवसर प्राप्त हो चुका है।

चैत्र शुक्ल 9 के दिन भगवान रामचन्द्र का जन्मोत्सव मनाया जाता है। ब्रज में राम नवमी के अवसर पर राम मन्दिरों में भव्य फूल बंगले का आयोजन किया जाता है। राम जन्म की बधाईयाँ गायी जाती हैं तथा इस अवसर पर ठाकुरजी का दूध, घृत, शक्कर, शहद व दही आदि सामग्री को मिश्रित कर पंच द्रव्य से अभिषेक कराया जाता है। जिसमें दिव्य जड़ी-बूटियाँ, इत्र इत्यादि सामग्री को मिश्रित किया जाता है। इस दिन भगवान राम को पीले रंग के वस्त्र धारण कराये जाते हैं। छप्पन भोग का आयोजन किया जाता है। मन्दिरों को भव्य तरीके से सजाया जाता है।

# श्री हनुमान जयन्ती

चैत्र शुक्ल 15 को पवन-सुत हनुमान जी का जन्मोत्सव मनाया जाता है। इस दिन हनुमान मन्दिरों में सजावट और विशेष दर्शन होते हैं। कहीं-कहीं हनुमान जी का जन्म कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी, मंगलवार के दिन महानिशा में अंजना देवी के गर्भ से माना गया है। 'व्रत-रत्नाकर' की ऐसी ही मान्यता है किन्तु 'हनुमदुपासना कल्पद्रुम' में कहा है –

*चैत्रे मासि सिते पक्षे पौर्णमास्यां कुजेऽहनि।*
*मौञ्जीमेखलया युक्तः कोपीन परिधारकः॥*

यानि चैत्र शुक्ल पूर्णिमा, वार मंगल को मूँज की मेखला से युक्त, कौपीन और यज्ञोपवीत से भूषित हनुमान जी ने जन्म लिया। साथ में यह भी कहा जाता है कि कैकेयी के हाथ से चील के द्वारा लाई हुई यज्ञ की खीर खाने से अंजना ने हनुमान जी को जन्म दिया। हनुमान जी के जन्म से सम्बन्धित कई अन्य कथायें भी मिलती हैं।

शास्त्रों में वर्णित प्रसंग के अनुसार गिर्राज पर्वत को ब्रज में स्थापित करने का श्रेय भी मारुति नन्दन हनुमान को प्राप्त है। एक प्रसंग के अनुसार सेतु निर्माण के दौरान जब पत्थरों की आवश्यकता थी तो पूरी वानर सेना के साथ वीर हनुमान भी इस कार्य हेतु तत्पर थे। उस समय जब सभी वानरों को यह सूचना दी गई कि सेतु का निर्माण पूर्ण हो चुका है तो उस समय हनुमान जी द्वारा गिर्राज पर्वत को यहाँ स्थापित किया गया तथा कहा गया कि सेतु का कार्य पूर्ण होने के कारण भले ही आप प्रभु की सेवा में न आ सके लेकिन कृष्ण अवतार में आपकी महत्ता सर्वविदित होगी।

हनुमान जयन्ती का उत्सव ब्रज क्षेत्र में अत्यन्त धूमधाम के साथ मनाया जाता है। वृन्दावन के सिंहपौर हनुमान, लुटेरिया हनुमान, नीमकरौली हनुमान, पंचमुखी हनुमान, केसीघाट स्थित हनुमान व अन्य हनुमान मन्दिरों में जन्मोत्सव का आयोजन किया जाता है। मथुरा में संकटमोचन हनुमान, कंकाली, अम्बरीष टीला बड़े हनुमान, दस भुजाधारी हनुमान आदि स्थानों पर हनुमानजी का प्राकट्य उत्सव

अत्यन्त धूमधाम से मनाया जाता है। हनुमानजी का पंचामृत स्नान, फूल बंगला, छप्पनभोग आदि का आयोजन किया जाता है। मथुरा, वृन्दावन के अतिरिक्त पूरे ब्रज क्षेत्र में हनुमान जयन्ती पर हनुमान मंदिरों में विभिन्न आयोजन होते हैं।

## शीतला अष्टमी (बासौड़ा)

वैशाख कृष्ण पक्ष की अष्टमी को प्राय: चेचक आदि के प्रकोप से बचने के लिये शीतला माता की पूजा की जाती है। मोहल्ले की औरतें अपने-अपने हिसाब से आगे-पीछे भी इस पूजा को कर लेती हैं और सबके हिसाब से चलना ही प्रकोप से बचने के लिये बेहतर माना जाता है। इस दिन घरों में चूल्हा नहीं जलाया जाता। व्रत या पूजा के एक दिन पूर्व ही खाने-पीने की समस्त सामग्री तैयार करके रख दी जाती है। इसी बासी भोजन से दूसरे दिन शीतला माता का पूजन किया जाता है और उसके बाद इसी खाने को खाया जाता है। इसे 'बासौड़ा' या 'बसियौरा' भी कहा जाता है।

प्रात:काल ही स्त्रियाँ बसौड़े की समस्त सामग्री और जल, रोली, हल्दी, चावल, दही, चने की भीगी दाल, हलुआ, पुआ, पूड़ी और होली के हरे होरा तथा गूलरी आदि देवी शीतला माता पर चढ़ाकर पूजा करती हैं। ब्रज क्षेत्र में ऐसी धारणा है कि जस घर में चेचक से कोई बीमार हो, उसे यह व्रत नहीं करना चाहिये।

## बरूथनी एकादशी एवं वल्लभाचार्य जयन्ती

यह वैशाख कृष्ण-पक्ष की एकादशी को मनायी जाती है। यह व्रत सुख-सौभाग्य का प्रतीक है। इस व्रत के सम्बन्ध में कहा गया है कि "सुपात्र ब्राह्मण को दान देने, करोड़ों वर्ष तक ध्यान-मान, तपस्या करने तथा कन्यादान के भी फल से बढ़कर 'बरूथनी एकादशी' का व्रत है। इसका माहात्म्य सुनने से ही सौ गायों की हत्या का भी दोष नष्ट हो जाता है। इस प्रकार यह बहुत ही फलदायक व्रत है।"

इसी दिन पुष्टि सम्प्रदाय के प्रवर्तक महाप्रभु वल्लभाचार्य की जयन्ती भी पुष्टिमार्गीय भक्तगण विभिन्न उत्सवों के साथ मनाते हैं।

अक्षय तृतीया पर
ठा. श्री बाँके बिहारी जी
वृन्दावन
के चरण दर्शन

ठा. श्री राधावल्लभ जी,
वृन्दावन
के झूला दर्शन

दीपावली के उपरान्त गोवर्धन पूजन का दृश्य

श्री गोवर्धन महाराज का अन्नकूट महोत्सव (भट्ट गली, वृन्दावन)

आश्विन मास में मन्दिरों में निर्मित सांझी दर्शन

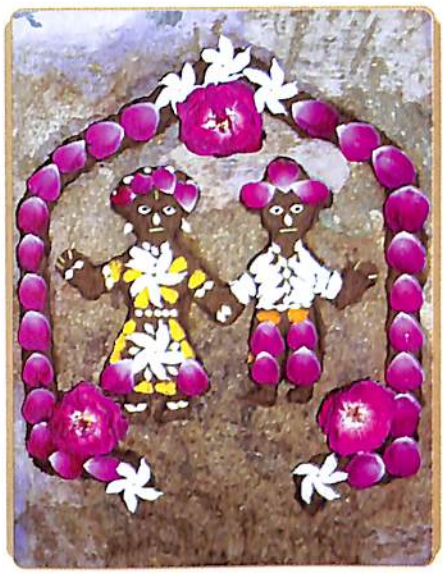

फूल बंगले में
ठा. श्री राधारमण जी,
वृन्दावन

नृसिंह चतुर्दशी पर
नृसिंह जी का मुखौटा
धारण कर नृत्यरत
कलाकार

बरसाने की लठामार होली

बलदेव (दाऊजी) का हुरंगा

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर ठा. श्री राधारमण जी का पंचामृत अभिषेक

ठा. श्री द्वारकाधीश जी, मथुरा का घटा दर्शन

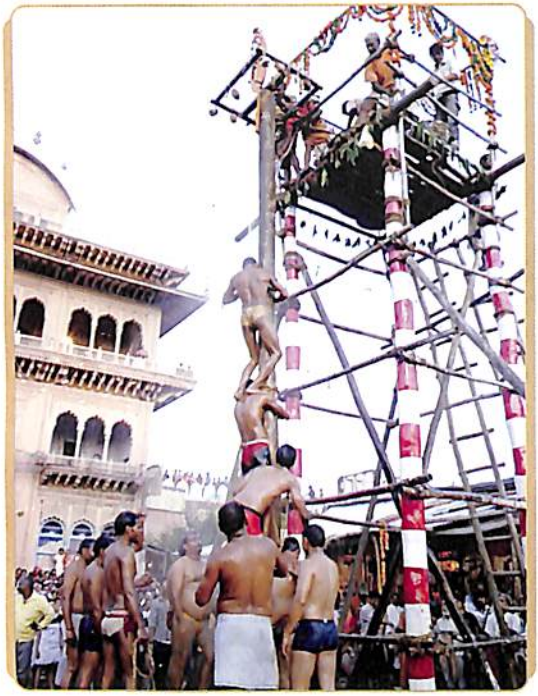

श्री रंगजी मन्दिर,
वृन्दावन में आयोजित
लट्ठे का मेला

शरद पूर्णिमा
के अवसर पर
ठा. श्री राधारमण जी,
वृन्दावन

श्री जगन्नाथ रथ यात्रा इस्कॉन, वृन्दावन

श्री रंगजी मन्दिर, वृन्दावन का ब्रह्मोत्सव (रथ का मेला)

# अक्षय तृतीया

मान्यता के अनुसार अक्षय तृतीया वाले दिन किये गये पुण्य कार्यों का कभी क्षय नहीं होता। प्रत्येक विक्रमी संवत के वैशाख में शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को 'अक्षय तीज' की संज्ञा प्राप्त है। ब्रज के प्रत्येक वैष्णव देवालयों में अक्षय तृतीया का यह पर्व प्रभु की ग्रीष्मकालीन सेवाओं में अति महत्वपूर्ण है। ब्रजमण्डल के नंदगाँव, बरसाना, गोकुल, महावन, दाऊजी, वृन्दावन, गोवर्धन, राधाकुण्ड सहित अनेक स्थानों के देवालयों में अक्षय तृतीया अर्थात् चन्दनोत्सव की यह अपनी विशिष्ट परम्परा है। लिखित साहित्य में भी इसकी प्राचीनता के उल्लेख दर्शित होते हैं जो पिछले सैकड़ों वर्षों में यहाँ की देवालयी संस्कृति के अन्तर्गत पल्लवित होते रहे। सायंकाल मंदिर में श्रीविग्रह के सम्मुख समाज गायन अथवा कीर्तन के दौरान इसके गायन की परम्परा आज भी देखी जा सकती है। वृन्दावन शोध संस्थान सहित ब्रजमण्डल के अनेक निजी ग्रंथागारों में इस विषय से सम्बन्धित अनेक प्राचीन पोथियाँ इस पारम्परिक उत्सव का महत्त्व दर्शाने वाली हैं। इस दिन ब्रज में सबसे बड़ा उत्सव वृन्दावन में श्री बाँके बिहारी जी मन्दिर में होता है । ठाकुर जी इस दिन वर्ष में एक बार चरण दर्शन देते हैं । लाखों की भीड़ दर्शनों हेतु आती है ।

बसन्त ऋतु ब्रज में धमाल मचाने के बाद विदा ले चुकी है एवं गर्मी अपनी यौवनावस्था में आ रही है। तन-मन को भीषण ताप से जलाती हुई ग्रीष्म ऋतु भी अपने भीषण ताप से सबको तपा रही है। सभी व्यक्ति ग्रीष्म के प्राकृतिक प्रहारों से बचने के लिये खानपान व रहन-सहन में सुरक्षात्मक एवं आरामदायक परिवर्तन करते है। भक्तगण भी अपने आराध्य ठाकुर जी को शीतलता प्रदान करने के लिये नाना प्रकार के प्रबन्ध करते हैं। जिससे ठाकुरजी को गर्मी न लगे तथा उन्हें ठंडक प्रदान हो। ठाकुर श्रीराधाश्यामसुन्दर जी का शीतल भोग लगाने का क्रम भी शुरू हो जाता है। जिसमें मुख्य रूप से सत्तू, ऋतुफल, शरबत, ठण्डाई, लस्सी आदि मुख्य हैं।

ठाकुर जी को गर्मी के कुप्रभावों से बचाने के लिये ठाकुरजी के सर्वांग पर चन्दन का श्रृंगार किया जाता है। इस उत्सव को चन्दन यात्रा या अक्षय तृतीया के नाम से जाना जाता है। इस दिन ठाकुरजी के नेत्र व वंशी को छोड़कर समस्त श्रीअंग

में चंदन का लेप किया जाता है। इसके लिये एक महीने पहले से ठाकुरजी के भक्तों द्वारा चन्दन घिसाई का कार्य शुरू हो जाता है। बड़ी-बड़ी पारम्पारिक शिलाओं पर बड़े-बड़े चन्दन से घिसकर उसमें दुर्लभ जड़ी-बूटी, केसर, कपूर, आगरू, गुलाब जल से मिश्रण करके ठाकुर जी का अद्‌भुत श्रृंगार किया जाता है । चन्दन का ही मुकुट, चन्दन के ही वस्त्र एवं चन्दन के ही आभूषण धराये जाते हैं। मन्दिर प्रांगण में चन्दन की सुगन्धित खुशबू सभी ओर फैल जाती है एवं सभी भक्तों को शीतलता प्रदान करती है। भव्य फूल बंगलों का आयोजन भी इसी दिन से शुरू होता है। मोगरा, गुलाब के पुष्पों से सुसज्जित फूल बंगला अपनी सुगन्ध चन्दन की सुगन्ध में मिलाकर भक्तों को सुख का अनुभव प्रदान करते हैं। भक्तों के जनसमूह को अत्यधिक आनन्द आता है। प्रथम बार दर्शन करने वाले भक्तगण आश्चर्यचकित रहते हैं। नेत्रों ने जो देखा उसमें विश्वास करने में काफी समय लग जाता है। भक्तों का सुमधुर गुनगुनाना वातावरण को भक्ति रस सागर का रूप देता है।

*सर्वांगे हरिचन्दनम् सुललितम् एव चन्दनचर्चित*
*नील कलेवर पीत वसन वनमाली।*

गौड़ीय सम्प्रदाय के सप्त देवालयों में इस उत्सव को चन्दन यात्रा के नाम से जाना जाता है । समस्त मन्दिरों में चन्दन का श्रृंगार इसकी विशेषता है । इसी के साथ चन्दन यात्रा उत्सव का विराम किया जाता है। भारतीय वैदिक ज्योतिषीय गणनानुसार प्रत्येक संवत् के वैशाख में शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को अक्षय तृतीया की संज्ञा प्राप्त है। शास्त्रानुसार इस दिन किये गये सभी पुण्य कार्यों का कभी क्षय नहीं होता उसका अक्षय पुण्य होता है। अक्षय तृतीया युगादि तिथि है। अर्थात् इस पुण्य पवित्र दिवस को चतुर्युगी में वैशाख शुक्ल तृतीया (अक्षय तृतीया) चन्द्रवार के द्वितीय प्रहर रोहिणी नक्षत्र के शोभन योग में त्रेतायुग का शुभ मुहूर्त में शुभारम्भ हुआ। इस युग में श्रीराम, श्रीवामन तथा श्रीपरशुराम ये तीन भगवद् अवतार हुये। इस युग में महाराज हरिश्चन्द्र, इक्ष्वाकु आदि सूर्यवंशी धर्मात्मा क्षत्रिय राजाओं का राज्य था। इस युग में धर्म तीन पाद रह गया था। गौऐं त्रिकाल दुग्ध देने वाली होती थीं। जनमानस में प्राय: रजत (चाँदी) के पात्र हुआ करते थे तथा स्वर्ण मुर्दा प्रचलन में थी, वर्षा समय पर होती थी। पृथ्वी सस्य एवं स्वर्ण से परिपूर्ण थी, ब्राह्मण तीन वेदों के ज्ञाता थे। किंचित-न्यून, तपोनिष्ठ, परस्त्री, परद्रव्य से

परांगमुख होते थे। वे श्राप देने में समर्थ होते थे। स्त्रियाँ चरित्रवान, पतिव्रता होती थीं। विचित्र विमानों का उपयोग होता था। जो इन्द्र लोक तक जाने में समर्थ थे। इस युग में प्रधान तीर्थ नैमिषारण्य था। इस युग की आयु 12960001 (एक करोड़ उन्तीस लाख साठ हजार एक) वर्ष थी। ज्योतिष के अनुसार पूरे संवत् में साढ़े तीन सिद्धा तिथियाँ मानी जाती हैं। जिनमें कोई भी पुण्य धार्मिक कार्य करने के लिये पंचांग शुद्धि की कोई आवश्यकता नहीं होती। उनमें यह एक अक्षय तृतीया भी है। इसे पूर्ण सर्वार्थ सिद्धि-योग की संज्ञा प्राप्त है। यही कारण है कि आज भी इस तिथि कों हर कार्य के लिए अनसूझा मुहूर्त माना जाता है ।

## श्री नृसिंह जयन्ती (नृसिंह चतुर्दशी)

धर्म की रक्षा के लिये समय-समय पर भगवान को अवतार लेना पड़ा है। ऐसे ही अवतारों में एक नृसिंह का अवतार वैशाख शुक्ल चतुर्दशी को हुआ था इसलिये इस तिथि को नृसिंह चतुर्दशी कहते हैं। इसे ब्रज में धार्मिक उत्सव के साथ लोक त्यौहार के रूप में भी मनाया जाता है। इस दिन मन्दिरों में विशेष दर्शन होते हैं और अनेक नर-नारी व्रत रखते हैं। ये उत्सव ब्रज क्षेत्र में बहुत महत्व रखता है।

वैसे तो नृसिंह जयंती का पर्व पूरे भारत में अपनी-अपनी तरह से विभिन्न रीति-रिवाजों के मध्य हर्षोल्लास से आयोजित होता है लेकिन अपनी विशिष्टताओं के चलते ब्रज क्षेत्र में यह उत्सव देवालयों से अधिक लोक संस्कृति में अपनी पृथक् पहचान बनाये हुए है। धर्म की रक्षा के लिये समय-समय पर प्रभु ने जो अवतार लिये उनमें नृसिंहावतार का सर्वविदित प्रसंग महत्त्वपूर्ण है। ब्रजमण्डल में मथुरा एवं वृंदावन सहित कई स्थानों पर इसके मंदिर देखे जा सकते हैं। नृसिंह चतुर्दशी वाले दिन लोकनाट्य के रूप में इसके लीला मंचन की परम्परा ने अपनी विशिष्टता के चलते लोगों को शुरू से ही अपनी ओर आकर्षित किया है। मथुरा के द्वारिकाधीश मंदिर सहित कई मौहल्लों में होने वाले नृसिंह नृत्य के साथ ही वृन्दावन की अनेक नृसिंह लीलायें इस मनोरथ का स्थानीय लोक मन में महत्त्व प्रदर्शित करने वाली हैं।

ब्रज क्षेत्र की नृसिंह नृत्य परम्परा वास्तव में युद्धक कला से अभिप्रेत है जिसके अन्तर्गत पहलवानी का अभ्यास जरूरी है। अच्छे दम-खम वाले व्यक्ति से

ही इस कला के उत्कृष्ट प्रदर्शन की उम्मीद की जा सकती है। नृसिंह लीला के दौरान ब्राह्मण वर्ग से ही पात्रों का चयन किया जाता है। लीला आयोजन की पारम्परिक शैली के अनुसार यहाँ नारद, वराह, हनुमान-मकरध्वज एवं गणेश के पात्र तैयार किये जाते हैं जो नगर में घूम-घूमकर मल्लविद्या के अन्तर्गत प्रचलित कसरतों जैसे- बैठक, हनुमान बैठक, चक्रदण्ड एवं ढाई चाल का प्रदर्शन करते हैं। वृन्दावन की नृसिंह लीला में सर्वप्रथम नारद का स्वरूप तैयार किया जाता है, जो नगर में बालकों के दल के साथ घूमते हुए जगह-जगह इस बात की घोषणा करता है कि आज सायंकाल नृसिंह लीला का आयोजन अमुक जगह होगा। नारद के कुछ समय उपरान्त अग्र पूजा के निमित्त गणेश भगवान का स्वरूप निकाले जाने की परम्परा है तत्पश्चात सायंकाल पारम्परिक वाद्य यंत्र (विजय घण्टों) की ध्वनि के मध्य नृसिंह लीला का भावपूर्ण मंचन होता है जिसमें मल्लविद्या से अभिप्रेत नृत्य करते हुए भगवान नृसिंह हिरण्यकशिपु का वध करते हैं। प्रभु का क्रोध शान्त करने हेतु प्रहलाद का स्वरूप भी लीलानुकरण के दौरान समीप ही रहता है। मथुरा के द्वारिकाधीश मंदिर में भी नृसिंह लीला का आयोजन धूमधाम से सम्पन्न होता है जिसमें अपराह्न नृसिंह भगवान का अभिषेक तथा प्रसाद वितरण आदि कार्यक्रम होते हैं। नृसिंह चतुर्दशी वाले दिन ब्रज के कई स्थलों पर लगभग पूरी रात्रि इसके आयोजन की धूम रहती है जिसमें युवा एवं बालक वर्ग का उत्साह देखते ही बनता है। नृसिंह जयंती वाले दिन शालिग्राम पूजन का विशेष माहात्म्य है। वृंदावन के राधारमण मंदिर में यह मनोरथ श्रीविग्रह के प्राकट्योत्सव के रूप में मनाया जाता है।

नृसिंह जयन्ती के दिन शालिग्राम जी का पूजन व पंचामृत स्नान होता है। ठाकुजी को वस्त्र श्रृंगार धारण कराके सिंहासन पर विराजमान करते हैं। ठाकुरजी की बड़ी विग्रह का पंचामृत स्नान नहीं होता है। ठाकुरजी की गोद में विराजे हुये नृसिंह जी का भाव से पंचामृत स्नान होता है। पंचामृत में नृसिंह जी की प्राकट्य की भावना करके नृसिंह जी को तिलक-आरती कराके भोग आदि सब कार्य किये जाते हैं।

नृसिंह चतुर्दशी के दिन गली-मुहल्ले तथा विभिन्न देवालयों में नृसिंह लीला का लोक नाट्य-नृत्य होता है। मथुरा के श्री द्वारिकाधीश जी के मन्दिर की नृसिंह

लीला प्रसिद्ध है। इस लोकोत्सव में विविध देवी-देवताओं के चेहरे लगाकर लोक नृत्य किया जाता है। नृसिंह जी का चेहरा बहुत भारी व बड़ा होता है। उसे लगाकर नाचना साधारण व्यक्ति का कार्य नहीं है। इस उत्सव में नृसिंह जी का वीर नृत्य और ताड़िका का लोक नृत्य ब्रज की प्राचीन लोक नृत्य कला का प्रतिनिधित्व करते हैं। नृसिंह जी जो विष्णु जी के चतुर्थ अवतार माने जाते हैं। उसी भावना से यहाँ पर नृसिंह चतुर्दशी का आयोजन बड़े हर्षोल्लास के साथ किया जाता है। ब्रजभूमि पर नृसिंह अवतार की लोक कथा बहुत प्रचलित है। वृन्दावन में नृसिंह चतुर्दशी का उत्सव बहुत ही हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इस दिन सुबह से ही नृसिंह मन्दिर में दर्शनार्थियों का ताँता लगा रहता है। वृन्दावन के अठखम्भा स्थित नृसिंह मन्दिर तथा सूरमाकुंज प्राचीन नृसिंह मन्दिर (केशीघाट) तथा वृन्दावन के अन्य मन्दिरों में भी नृसिंह चौदस का उत्सव बड़े धूमधाम के साथ मनाया जाता है। नृसिंह मन्दिर के सेवायत नृसिंह लीला का आयोजन करते हैं। जिसका प्रदर्शन सायंकाल के समय चौराहे पर खम्भा बनाकर तथा हिरण्यकशिपु तथा नृसिंह भगवान के स्वरूप बनाकर नृसिंह लीला की जाती है तथा लीला के पश्चात गणेश जी, नृसिंह जी तथा नृसिंह जी की गोद में बेटे प्रहलाद सिंहासन पर विराजमान होते हैं। उसके पश्चात भगवान नृसिंह देव जी की आरती की जाती है।

नृसिंह मन्दिर में दोपहर 12 बजे ठाकुर नृसिंह जी का जन्म किया जाता है तथा उनका पंचामृत स्नान किया जाता है। ठाकुरजी को खीरा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूजा, शर्बत आदि सामग्रियों का भोग लगाया जाता है। इसके पश्चात नगरवासियों को तथा दर्शनार्थियों को पंचामृत तथा फलों का भोग वितरित किया जाता है तथा सायंकाल के समय लीला के पश्चात भगवान को विभिन्न व्यंजनों का भोग अर्पित किया जाता है। नृसिंह चतुर्दशी का उत्सव ब्रज क्षेत्र में पूरे दो दिन तक मनाया जाता है तथा अन्य विग्रहों की पूजा पूरे पाँच दिन तक की जाती है।

वैशाख शुक्ल चौदस को नृसिंह प्राकट्योत्सव के अवसर पर मथुरा-वृन्दावन की छठा निराली होती है। इसे नृसिंह चौदस के नाम से भी जाना जाता है। इस दिन नृसिंह जी की पोशाक और मुखौटा धारण कर स्वरूपों द्वारा नृत्य किया जाता है। श्रद्धालुओं के आग्रह पर ये स्वरूप घर-घर जाकर भक्तों का आतिथ्य स्वीकारते हैं, नृत्य करते हैं। आशीर्वाद देते हैं तथा सड़क के चौराहों पर

हिरण्यकशिपु वध की लीला करते हैं। जिसे देखने के लिये हजारों भक्तों का सैलाब उमड़ता है। नृसिंह चौदस के एक दिन पहले गणेश जी तथा वाराह भगवान के नृत्य की परम्परा है। उसके बाद नृसिंह चौदस वाले दिन हिरण्यकशिपु, हनुमान जी, बालाजी आदि नृत्य करते हुये सड़कों पर घूमते हैं।

मान्यता है कि भगवान विष्णु के अवतार नृसिंह का आगमन गृहस्थों के यहाँ कल्याणकारी होता है। इनके साथ वाराह स्वरूप भी नृत्य करते हुये चलते हैं। इन्हें नृत्य के लिये प्रेरित करने वाले वाद्ययंत्र को विजयघंट के नाम से जाना जाता है। प्रात: से लेकर सायंकाल तक इन स्वरूपों का पौरुष देखकर भक्तवर विभोर होकर नारायणी शक्ति को प्रणाम कर उठते हैं। मथुरा, वृन्दावन, गोकुल, नन्दगांव, बरसाना, राधाकुण्ड, छाता, कोसी तथा कामवन आदि जगहों पर यह उत्सव बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है।

नृसिंह भगवान से जुड़ी पौराणिक कथा इस प्रकार है - सतयुग में दो भाई हुये थे जिनमें से एक का नाम हिरण्यकशिपु तथा दूसरे का नाम हिरण्याक्ष था। वे दोनों राक्षस प्रवृत्ति के थे। इनमें से हिरण्याक्ष का वध भगवान ने वाराह अवतार लेने पर कर दिया था। लेकिन हिरण्यकशिपु ने भगवान ब्रह्मा की आराधना करके तथा भगवान शिव की घनघोर तपस्या करके ब्रह्मा तथा शिव को प्रसन्न करके उनसे वरदान प्राप्त किया कि मैं न पशु से, न दैत्य से, न दानव से, न देवता से, न अन्दर, न बाहरए न दिन में, न रात में मरूँ। ऐसा वरदान प्राप्त करने के पश्चात वह अपने आपको भगवान समझने लगा तथा लोगों पर अत्याचार करने लगा। धरती पर त्राहि-त्राहि मच गई। ऐसे अत्याचारी राक्षस के घर प्रहलाद नाम के बालक का जन्म हुआ जो कि धार्मिक प्रवृत्ति का था। वह भगवान विष्णु का भक्त था। पिता ने उसे मारने के बहुत प्रयास किये पर सारे प्रयास विफल हो गये तथा उसका बाल भी बाँका नहीं हुआ। अन्त में एक लोहे के गर्म खम्भे पर रस्सियों से प्रहलाद को बाँध दिया तथा उससे पूछा बता तेरा भगवान कहाँ पर है। तब प्रहलाद ने कहा कि भगवान सब जगह है। मुझमें आपमें सब जगह भगवान है। तब हिरण्यकशिपु ने पूछा कि इस खम्भे में तेरा भगवान है। तब प्रहलाद ने कहा कि हाँ, यहाँ पर भी भगवान है। फिर हिरण्यकशिपु ने खम्भे पर जोर से गदा का प्रहार किया तो उसमें नृसिंह भगवान प्रकट हो गये जिनका शरीर आधा सिंह का था आधा मानव का था। उसके बाद

हिरण्यकशिपु को भगवान नृसिंह जी ने देहली पर गोधूलि बेला में अपने जंघा पर लिटाकर नाखूनों से उसके पेट को फाड़कर उसका वध कर दिया। इसी का नाट्य रूपान्तर करके ब्रज में गली-मुहल्लों तथा देवालयों में बड़े हर्षोल्लास के साथ उत्सव का आयोजन किया जाता है।

## वैशाखी पूर्णिमा

धार्मिक मान्यताओं के अनुसार वैशाख मास की पूर्णिमा को अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। ब्रज के श्री राधारमणलाल जू महाराज मन्दिर में इसी दिन ठाकुर श्री राधारमणलाल का प्राकट्योत्सव बड़े ही धूमधाम से मनाया जाता है। श्री राधारमणलाल मन्दिर का सप्त देवालयों में प्रमुख स्थान प्राप्त है।

हिन्दू धर्म के अनुसार भगवान् विष्णु के नवम अवतार माने जाने वाले भगवान बुद्ध का भी इसी दिन जन्म हुआ और उन्हें बुद्धत्त्व की प्राप्ति हुई तथा इसी दिन उनका महापरिनिर्वाण भी हुआ था। अत: बौद्ध धर्मावलम्बियों के लिये तो यह दिन बेहद महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। वे इस दिन को 'बुद्ध जयन्ती' के रूप में मनाते हैं।

इस दिन को 'वैशाखी उत्सव' के रूप में राष्ट्रीय स्तर पर भी मनाया जाता है। लाखों-करोड़ों श्रद्धालु पवित्र नदियों में स्नान करते हैं। पंजाब में नव वर्ष का प्रारम्भ इसी दिन से मानते हैं।

## वन विहार

वैशाख मास की पूर्णिमा की चाँदनी रात में वन विहार और मथुरा की परिक्रमा लगाने की प्रथा है। इस दिन संगीत की सरस स्वर-लहरियाँ भी रात्रिपर्यन्त कानों में रस घोलती सुनाई पड़ जाती हैं।

वृन्दावन में यही आयोजन ज्येष्ठ मास में कृष्ण पक्ष की द्वितीया को मनाया जाता है। श्री प्रभुदयाल मीतल के अनुसार - 'इस प्रकार के आयोजन 'बसन्त रास' की प्राचीन परम्परा का अनुसरण करते हैं।

# जल विहार

ऋतुकालीन सेवा परम्परा के अन्तर्गत ग्रीष्म ऋतु में ब्रज के देवालयों में जल विहार का मनोरथ देखते ही बनता है। सायंकाल मंदिरों में चलते फुव्वारे तथा समाज अथवा कीर्तन के दौरान जल विहार सम्बन्धी पदों का गायन का दृश्य मानव मन को सहज ही विमोहित करने वाला है।

श्रीधाम वृन्दावन ब्रजभूमि का हृदय है। भगवान श्रीकृष्ण की क्रीड़ास्थली वृन्दावन को मन्दिरों की नगरी कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। मंदिरों का पौराणिक, ऐतिहासिक एवं स्थापत्य कला की दृष्टि से सभी का अपना अलग-अलग महत्व है। ऐसा ही स्थापत्य कला की दृष्टि से शाहजी मंदिर वृन्दावन का एक प्रमुख मंदिर है। इस मंदिर का निर्माण लखनऊ निवासी शाह कुन्दनलाल एवं शाह फुन्दनलाल द्वारा कराया गया था। सन् 1860 में मंदिर की नींव रखी गयी थी एवं सन् 1868 में मंदिर बनकर तैयार हुआ एवं वसंत पंचमी के दिन श्रीविग्रह की प्राण-प्रतिष्ठा इस मंदिर में हुयी। तब से लेकर आज तक श्रीविग्रह की सेवा-पूजा उत्सव आदि निरंतर एवं अनवरत रूप से मनाये जा रहे हैं। प्रमुख रूप से वसंत उत्सव, होली उत्सव, जल यात्रा पर्व, श्रावण उत्सव, जन्माष्टमी, दीवाली, अन्नकूट उत्सव आदि बड़े भाव से आयोजित होते हैं।

जलयात्रा उत्सव अथवा जल विहार उत्सव इस मंदिर का एक विशेष एवं प्रमुख उत्सव है। इस दिन श्रीविग्रह निज जगमोहन में विराजमान अपितु मंदिर में पार्श्व में स्थित उपवन वाटिका में जल विहार कुंज में विराजते हैं एवं भक्तों को दर्शन देते हैं। यह उपवन वाटिका लगभग 300 वर्ष प्राचीन है। इसमें मुगल शैली काल के फव्वारे व नहरें निर्मित हैं। नहरों के चारों ओर चार बड़े वराह बने हुये हैं जिसमें विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधे लगे हैं जो कि उपवन वाटिका को और अधिक सुन्दरता व सजीवता प्रदान करते हैं। जल यात्रा उत्सव वर्ष में ज्येष्ठ माह की पूर्णमासी को मनाया जाता है। मान्यता के अनुसार साल का यह सबसे अधिक गर्म दिन होता है। इसी कारण से ठाकुरजी को शीतलता प्रदान करने के लिये जलयात्रा उत्सव ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा को मनाते हैं। इस दिन ठाकुरजी को शीतल पेय, शरबत, ठंडाई आदि का एवं विभिन्न फल आम, खरबूजा, तरबूजा, लीची,

फालसेब आदि का भोग लगाया जाता है। ठाकुरजी को चंदन का लेप लगाया जाता है। बहुत ही हल्के व कोमल वस्त्र की ठाकुरजी नयी पोशाक धारण करते हैं। रायबेल व अन्य फूलों के बंगले में ठाकुरजी विराजते हैं। ठाकुरजी के सिराहने बेला फूल का बना पंखा रखा जाता है। दर्शन खुलते ही सारे फव्वारे चला दिये जाते हैं जिसमें कि पानी ऊपर छत पर निर्मित जंगी हौद में से आता है। संध्या आरती के उपरान्त ठाकुरजी के स्नान दर्शन होते हैं। ठाकुरजी के स्नान के जल में केसर, कपूर, इत्र आदि का मिश्रण तैयार कर जल में मिलाया जाता है। ऐसे जल से स्नान कर श्रीविग्रह जल विहार उत्सव पर भक्तों को दर्शन देते हैं।

जल विहार के कुछ आयोजन मन्दिरों के अतिरिक्त कभी-कभी यमुना के घाटों पर अथवा नावों में बँगले बनाकर ठाकुरजी के जल-विहार की प्रत्यक्ष झाँकी प्रस्तुत कर भक्तों का मन मोह लेते हैं।

## गंगा दशहरा

ज्येष्ठ शुक्ल दशमी को गंगा दशहरा होता है। इस दिन लोग गंगा स्नान करते हैं तथा गंगाजी की पूजा करते हैं। ब्राह्मणों एवं गरीबों को इस दिन दान दिया जाता है। इस दिन मन्दिरों में स्नान करके दही, चावल, मिश्री, अन्न, वस्त्र, छाता, जूता, खड़ाऊँ, पंखा, मिट्टी का जलपात्र, खरबूजा, ककड़ी, तरबूजा आदि का दान दिया जाता है। ऐसी मान्यता है कि इस दिन स्नान-तर्पण करने से दस पापों का नाश होता है। इस महीने में प्याऊ, कुआँ, तालाब, बाबड़ी, छायादार वृक्ष आदि लगाने का विशेष फल मिलता है।

पौराणिक कथा है कि इस दिन राजा भागीरथ ने गंगा को प्रसन्न किया था। गंगाजी इसी दिन धरती पर उतरी थी, इसलिये इस दिन से गंगाजी में बाढ़ आने लगती है। धरती पर आने पर जब गंगाजी क्रोधित हुई थी तब भगवान शिव ने उन्हें जटाओं में धारण किया था। इनके जैसी स्वच्छ, पवित्र तथा अनेक दिव्य गुण युक्त आरोग्य देने वाली नदी इस संसार में अन्य कोई दूसरी नहीं है। गंगा दशहरा का उत्सव ब्रज मण्डल में बड़ी धूमधाम के साथ मनाया जाता है। इस दिन गंगाजी के मन्दिर में गंगा माँ को घी, दूध, दही, शहद, इत्र तथा जड़ी-बूटियों से मिला हुआ जल से गंगा माँ का अभिषेक किया जाता है। वेद मन्त्रों का उच्चारण होता है तथा

महिलायें भजन गायन करती हैं। स्नान के पश्चात् गंगा मां को सुन्दर सफेद रंग के वस्त्र धारण कराते हैं, श्रृंगार कराते हैं। अनेक प्रकार के व्यंजनों का भगवती गंगा माँ का भोग लगाया जाता है तथा भण्डारे का आयोजन किया जाता है। गंगाजी के मन्दिर में हजारों श्रद्धालु उनके दर्शन की एक झलक पाने के लिये लालायित रहते है। मन्दिर प्रांगण का माहौल भक्तिमय होता है। वहाँ पर अपार शक्ति का अनुभव होता है। गंगा दशहरा के दिन सायंकाल के समय मन्दिर को देशी-विदेशी फूलों से सजाया जाता है तथा माताजी को फूलों का श्रृंगार किया जाता है। इस दिन पतंग उड़ाने की परम्परा है, इसलिये हर घर में गंगा दशहरा के दिन पतंग उड़ाने का आयोजन जरूर किया जाता है तथा गंगाजी के मन्दिर में सायंकाल के समय अनेक भक्तगण ''जय गंगा मैया'' बोलते हुये मन्दिर में दर्शन करने के लिये आते हैं तथा दर्शन करने के पश्चात् लौटते हैं। सम्पूर्ण ब्रज मण्डल में गंगा दशहरा का आयोजन बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। कहते हैं जो गंगा माँ के तट पर निवास करते हैं तथा गंगा जी का जलपान करते हुये गंगा जी की लहरों में झूलते हैं। गंगा जी के नाम का स्मरण करते हुये वह मनुष्य मोक्ष को प्राप्त करता है। पतित पावनी श्री गंगा जी की महिमा अपार है। आज का दिन गंगा जी का पृथ्वी पर आगमन दिन है। इसलिये इस दिन को गंगा दशहरा या गंगा दशमी कहा जाता है। वाराह पुराण में लिखा है- ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष दशमी हस्त नक्षत्र में गंगा जी स्वर्ग से अवतीर्ण हुई थी। स्कन्द पुराण का कथन है कि इस दिन भगवान राम ने समुद्र पर सेतु बाँधने का आयोजन कर सेतुबन्ध रामेश्वर की स्थापना की थी। इन कारणों से भी आज का दिन विशेष धार्मिक महत्व का माना जाता है। इस अवसर पर ब्रज की ग्रामीण जनता की बड़ी भीड़ होती है। जिसके स्वागत-सत्कार के लिये शर्बत तथा बर्फ के ठंडे जल की प्याऊ लगाई जाती है।

## स्नान यात्रा

ग्रीष्म ऋतु में सबसे भीषण गर्मी जेठ के महीने में होती है। इस माह में तपन के साथ गर्म हवा-लू के थपेड़े भी इस माह में अधिक रहते हैं। गर्मी की भीषणता से बचने के लिये मन्दिरों में विभिन्न प्रकार की तैयारियां की जाती हैं। गर्मी से बचने के लिये तथा ठाकुरजी को ठंडक प्रदान करने के लिये मन्दिरों में फव्वारों का प्रयोग

किया जाता है। इस भीषण गर्मी को सहन करने के लिये स्नान की व्यवस्था सर्वोपरि है। इस माह में ही जेठ के दशहरे पर स्नान, विशेषत: यमुना तथा गंगा स्नान का महत्व है। स्नान की परिपाटी ब्रज के देवालयों में भगवान को शीतलता प्रदान करने के लिये चली आ रही है। खस की टटिया लगाई जाती है। उन पर पानी का छिड़काव किया जाता है। भगवान को फूलों का श्रृंगार किया जाता है । हल्के महीन वस्त्र गर्मी के ताप से बचने के लिये तथा कुछ साधन विद्यमान रहते हैं। ठाकुर जी के दर्शनों के लिये जन समुदाय आकुल-व्याकुल रहता है। ठाकुर जी के पुष्पों में बेला, चमेली, रायबेल प्रधान हैं जिससे ठाकुरजी का श्रृंगार किया जाता है।

जेठ की पूर्णिमा को इस प्रचण्ड गर्मी में यह दिवस स्नान यात्रा, जल यात्रा के नाम से जाना जाता है। इस दिन विधि-विधान से मंत्रोच्चारण के साथ प्रभु का स्नान कराया जाता है तथा स्नान से संबंधित सुन्दर-सुन्दर पदों का गायन मन्दिरों में किया जाता है। शंख ध्वनि के साथ ब्रज की नारियाँ गायन करती हैं। स्नान की अमृत वर्षा के बाद गर्मी कुछ कम हो जाती है। स्नान के बाद वस्त्र पहनाकर फूलों का श्रृंगार किया जाता है। स्नान यात्रा का यह महोत्सव ब्रज के मन्दिरों में उत्साहपूर्वक मनाया जाता है। भगवान को शीतलता प्रदान करने के लिये स्नान की परंपरा प्राचीनकाल से चली आ रही है। विशेषकर ज्येष्ठ पूर्णिमा में श्रीजगन्नाथपुरी में श्रीजगन्नाथ जी का विशेष अभिषेक महोत्सव होता है। वहाँ स्नान वेदी में श्रीजगन्नाथजी, बलभद्र एवं सुभद्रा जी को विराजमान कराकर 108 जलपूर्ण स्वर्ण कलशों के शीतल जल से स्नान कराया जाता है। ब्रज में भी यह परम्परा है। ज्येष्ठ पूर्णिमा को वृन्दावन के सप्त देवालय आदि अन्य मन्दिरों में शीतल जल से ठाकुरजी का अभिषेक कराया जाता है। जल में अनेक प्रकार की जड़ी-बूटी मिलाकर उस जल से स्नान कराया जाता है। इस दिन ठाकुरजी जगमोहन में लता-पताओं एवं पुष्पों से सुसज्जित सिंहासन में विराजते हैं। चारों ओर पंखे एवं फुव्वारे चलाये जाते हैं। स्नान करने के बाद ठाकुरजी को हल्के महीन वस्त्र तथा पुष्प कलियों से निर्मित वस्त्र और आभूषण धारण कराये जाते हैं। ठाकुरजी की इस अलौकिक छवि के दर्शन के लिये भक्तजन व्याकुल रहते हैं। इस दिन ठाकुरजी को आम, जामुन, खरबूजा, ककड़ी, अनेक प्रकार के शर्बतों का विशेष भोग लगता है तथा सायंकाल में मंदिर का प्रांगण फूलों से सजाया जाता है तथा अनेक भक्त दर्शन के लिये मंदिर में आते हैं। सम्पूर्ण ब्रजमंडल मथुरा, वृन्दवन, डीग, कामवन, बरसाना, छाता, कोसी, नंदगांव,

बलदेव, गोकुल, महावन आदि जगह भी जल यात्रा या स्नान यात्रा बड़े धूमधाम के साथ मनाई जाती है। इस दिन मंदिरों में ठाकुरजी को नौका में बिठाकर नौका विहार कराया जाता है।

## रथ यात्रा

भारतीय वर्ष के बारह महीने में भगवान विष्णु की मुख्य बारह यात्राएँ या उत्सव होते हैं। अठारह पुराणों में प्राचीनतम विष्णु पुराण में वर्णित श्री विष्णु भगवान के सभी मन्दिरों में विशेषकर जगन्नाथ मन्दिर में इन उत्सवों का सिलसिला अक्षय-तृतीया के दिन चन्दन यात्रा से प्रारम्भ होकर होली में डोल यात्रा के साथ समापन होता है। इनमें मुख्यतम है- आषाढ़ शुदी द्वितीया की रथ यात्रा। जगन्नाथ पुरी की विश्व प्रसिद्ध यह रथ यात्रा वैभव, भव्यता, व्यय, बहुलता एवं जनाकर्षत्व है। विष्णु संहिता के अनुसार रथ यात्रा का शुभारम्भ आषाढ़ शुक्ल द्वितीया और समाप्ति आषाढ़ शुक्ल एकादशी को होती है। सम्पूर्ण ब्रज मण्डल मन्दिरों का गढ़ है। यहाँ पर अनेक मन्दिर हैं और इन मन्दिरों में अनेक उत्सव होते हैं। वृन्दावन श्रीकृष्ण की क्रीड़ास्थली है। श्रीधाम वृन्दावन में उत्सव-मेले बड़ी धूमधाम से मनाये जाते हैं। यहाँ पर रथयात्रा का मनोरथ भी हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। इस महीने में अत्यन्त भयंकर गर्मी के मध्य यह उत्सव मनाया जाता है। वृन्दावन के गौड़ीय सम्प्रदाय के सप्त देवालय तथा जगन्नाथ घाट के जगन्नाथ जी के मन्दिर में विशेष रूप से रथ यात्रा मनायी जाती है। सप्त देवालय के रथ अपने-अपने स्तर से बैण्ड-बाजों के साथ निकलकर नगर के मुख्य मार्गों से भ्रमण करते हुये ज्ञान गुदड़ी पहुँचते हैं।

भगवान श्री जगन्नाथ जी जो सबका कल्याण करते हैं। ऐसे जगन्नाथ जी का उत्सव वृन्दावन में मनाया जाता है। वृन्दावन में सप्त देवालयों के रथों को रंग-बिरंगे फूलों से सजाकर उसमें श्री जगन्नाथ जी को विराजमान करके सवारी निकाली जाती है। भक्तगण नाचते-गाते हुये सवारी के साथ चलते हैं तथा वृन्दावन के अन्य मन्दिर भी अपने-अपने रथ को सुसज्जित करके बैण्ड-बाजों के साथ सभी रथ ज्ञान गुदड़ी में एकत्रित होते हैं। ज्ञान गुदड़ी क्षेत्र एक पवित्र स्थल है। जहाँ उद्धव जी ने गोपियों को ज्ञान दिया था। यह ब्रजभूमि प्रेम-भक्ति एवं साधना की पवित्र स्थली

है। यहाँ ज्ञान उपदेश नहीं चलते, भगवान श्रीकृष्ण हमारे ब्रज में ही विराजमान हैं। वे कहीं नहीं गये हैं। उद्धव जी को गोपियों ने श्रीकृष्ण के दर्शन वृन्दावन में ही करा दिये। ज्ञान गुदड़ी वही पवित्र स्थल है। यहाँ सब रथ एकत्रित होते हैं। वैसे तो अनेक मन्दिरों से रथ यात्रा निकलती है लेकिन विशेष आकर्षण का केन्द्र जगन्नाथ मन्दिर ज्ञान गुदड़ी में स्थित है। उस मन्दिर से तीन रथों पर एक पर जगन्नाथ जी दूसरे पर उनके बड़े भाई बलभद्रजी तथा तीसरे रथ में बहिन सुभद्राजी विराजमान होकर बैण्ड-बाजों के साथ निकलते हैं तथा मार्ग में चलते हुये महन्त जी मार्ग में आम लुटाते हुये चलते हैं। इसी श्रृंखला में भगवान श्री जगन्नाथ जी की रथ यात्रा का महोत्सव मथुरा में मनाया जाता है। श्रीकृष्ण की क्रीड़ास्थली और जन्मस्थली पूरी तरह जगन्नाथमय नजर आती है। चारों तरफ से जय जगन्नाथ-जय जगन्नाथ जी के जयकारे सुनाई पड़ते हैं।

मथुरा के द्वारिकाधीश जी में ठाकुर जी के विशेष दर्शन होते हैं। प्रात:काल रथयात्रा की झाँकी के दर्शन तथा दोपहर में ठाकुरजी के विशेष दर्शन कराये जाते हैं। ठाकुरजी को रथ में विराजमान करके मन्दिर के जगमोहन में भ्रमण करते हैं। इस दौरान ठाकुरजी को आम, जामुन आदि का विशेष भोग लगाया जाता है। इसी के साथ ब्रज के अन्य स्थलों पर भी जगन्नाथ रथ यात्रा का महोत्सव बड़े हर्षोल्लास से मनाया जाता है। गिरि गोवर्धन-गिर्राज जी में भी जगन्नाथ रथ यात्रा का महोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। गिर्राज जी के मुखारविन्द, श्री हरिदेव जी मन्दिर तथा जतीपुरा आदि अनेक मन्दिरों में इस उत्सव का आयोजन बड़े हर्षोल्लास के साथ किया जाता है। इसी क्रम में डीग, कामवन (कामा), बरसाना, नन्दगाँव, बलदेव, गोकुल, महावन, छाता, कोसी आदि में जगन्नाथ रथ यात्रा का महोत्सव बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है। उत्साहपूर्वक छोटे-छोटे बच्चे भी सुन्दर रथ बनाकर जगन्नाथजी को रथ में विराजमान करके रथ यात्रा निकालते हैं। ये सभी ज्ञानगुदड़ी पर एकत्रित होकर ज्ञानगुदड़ी की परिक्रमा करने के पश्चात् अपने-अपने मन्दिर में चले जाते हैं। इस समय ज्ञानगुदड़ी स्थल को भी सुसज्जित किया जाता है। रथ महोत्सव पर हजारों भक्तजन आनन्द लेते हैं।

इसी तरह सम्पूर्ण ब्रज मण्डल में रथ यात्रा का उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। हजारों की संख्या में श्रद्धालु इस उत्सव का आनन्द लेते हैं।

# गुरु पूर्णिमा (व्यास पूर्णिमा)

आषाढ़ शुक्ल पक्ष पूर्णिमा को शिष्यगण अपने गुरु की पूजा-अर्चना करते हैं। इसलिये इस दिन को गुरु पूर्णिमा कहा जाता है। आज ही के दिन भगवान व्यासदेव जी का जन्म दिवस मनाया जाता है। इस कारण से इस दिन को व्यास पूर्णिमा भी कहते हैं। चैतन्य महाप्रभु के षड् गोस्वामियों में से एक सनातन गोस्वामी का इसी दिन देहावसान हुआ था। उन्हीं के शोक में उनके शिष्यगण सिर मुड़वाकर घूमते हैं। इसलिये इस दिन को मुड़िया पूनो के नाम से भी जाना जाता है।

*गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागूँ पाय।*
*बलिहारी गुरु आपने गोविन्द दियो बताय।।*

गुरु पूर्णिमा का यह पावन पर्व ब्रज में बहुत उत्साहपूर्वक मनाया जाता है। आज ही के दिन शिष्यगण अपने-अपने गुरु का पूजन-अर्चन करते हैं। उन्हें भेंट अर्पित करते हैं। कृष्णं वन्दे जगत्गुरु वैसे तो कहते हैं कि कृष्ण भगवान सबके गुरु हैं। वह जगतगुरु कहलाते हैं। जो लोग अपना गुरु नहीं बनाते हैं, भगवान कृष्ण को ही अपना गुरु बनाते हैं। क्योंकि सब कुछ कृष्ण से ही प्राप्त होता है तथा कृष्ण से इतर कोई नहीं है। वह सर्वव्यापी है। वैसे तो गुरु कई प्रकार के होते हैं। किसी से कुछ भी शिक्षा ग्रहण की बस वही गुरु बन गया। ऐसे गुरु कई हो सकते हैं। लेकिन एक गुरु ऐसे भी होते हैं जिनसे हम ईश्वर को प्राप्त करने की दीक्षा लेते हैं। जिनकी कठिन साधना करके ईश्वर को प्राप्त किया जाता है। इसलिये गुरु का इस संसार में सबसे ऊँचा स्थान है। उनका स्थान भगवान से भी ऊँचा माना गया है। गुरु ही ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग बताते हैं। ब्रज क्षेत्र में गुरु पूर्णिमा का त्यौहार बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। ब्रज में महा प्रभु चैतन्य के अनुगत षड गोस्वामियों में से एक थे सनातन गोस्वामी, जिन्होंने मदनमोहन जी के श्रीविग्रह को मथुरा के एक चतुर्वेदी परिवार से प्राप्त किया था तथा मन्दिर का निर्माण रामदास कपूर नाम के एक व्यापारी ने करवाया था। जिसमें सनातन गोस्वामी सेवा अधिकारी हुआ करते थे। उनका देहावसान गुरु पूर्णिमा के दिन हुआ था। चैतन्य सम्प्रदाय में उस दिन सनातन गोस्वामी का निर्वाणोत्सव या तिरोभाव उत्सव मनाया जाता है। इस सम्प्रदाय के विरक्त साधु कीर्तन करते हुये गोवर्धन में मानसी गंगा की परिक्रमा

करते हैं। इस दिन सनातन गोस्वामी की शिष्य परम्परा के साधु अपना सिर मुड़वाकर कीर्तन करते हुये गोवर्धन की परिक्रमा लगाते हैं।

इस दिन समस्त ब्रज तथा उसके आस-पास के अनेक गाँवों से लाखों नर-नारी गोवर्धन पहुँचते हैं और वहाँ मानसी गंगा में स्नान कर श्री गिर्राज जी की परिक्रमा करते हैं। सैकड़ों भक्त दण्डौती परिक्रमा भी लगाते हैं। यह ब्रज में ब्रजवासियों व भक्तगणों का सबसे बड़ा उत्सव है। इस अवसर पर परिक्रमा करती हुई ग्रामीण स्त्रियाँ भक्ति सम्बन्धी लोकगीत गाती हैं।

## हरियाली अमावस्या

श्रावण कृष्ण पक्ष को हरियाली अमावस का त्यौहार होता है। इस दिन ब्रज के मन्दिरों में गायन-वादन और झूलन के साथ उत्तम व्यंजनों से ठाकुरजी भोग के साथ हरियाली अमावस का आनन्द लेते हैं। गर्मी की प्रचण्ड तपन को सहन करके भयंकर ऊष्मा से सताये हुये प्राणी जब त्राहि-त्राहि करने लगते हैं तब उन्हें शीतलता प्रदान करने के लिये सावन का महीना आता है। इस महीने में सम्पूर्ण ब्रज-मण्डल झूमने लगता है। प्राय: देवालयों में झूलन महोत्सव होता है तथा घटाओं का आयोजन होता है। मन्दिरों में उस समय की सजावट देखने योग्य होती है। रंग-बिरंगे पर्दे और झालरें नाना प्रकार के फूल-पत्रों से सजे हुये मन्दिर में झाड़-फानूसों के प्रकाश में चमकने लगते हैं। सभी मन्दिरों में झूले डाले जाते हैं और अनेक रंग की घटायें बनायी जाती हैं। उसी रंग की ठाकुरजी को पोशाक धराई जाती है।

ब्रज के सभी मन्दिरों में यह आयोजन देखने लायक होता है। सावन के महीने में प्राय: सभी मन्दिर देवालयों में ठाकुर जी की नित्य रंग-बिरंगी झाँकियाँ श्रद्धालुओं को दिव्य संदेश देती हैं। यही कारण है कि समस्त भारतवर्ष के यात्रीगण यहाँ ब्रजभूमि में आते हैं तथा दर्शनों का लाभ लेते हैं। सावन के पूरे मास में प्राय: देवालयों में झूलन उत्सव का आयोजन किया जाता है। वैसे तो ब्रज में सावन के पूरे मास में देवालयों में आयोजन होते हैं लेकिन हरियाली अमावस से ठाकुरजी का विशेष आयोजन शुरू हो जाता है। मथुरा के वल्लभ सम्प्रदाय के द्वारिकाधीश के मन्दिर में हरियाली अमावस का आयोजन बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है।

इस दिन ठाकुर जी को हरे रंग के वस्त्र धारण कराते हैं तथा चाँदी या सोने के झूले में ठाकुरजी को झूला झुलाते हैं। मन्दिर में हरी घटा लगाई जाती है तथा मन्दिर के प्रांगण को हरे रंग की विद्युत रोशनी तथा पर्दे, झाड़-फानूस आदि से सजाया जाता है तथा इस दिन ठाकुरजी को घेवर, फेनी, गुजिया तथा अनेक प्रकार के व्यंजनों का भोग लगाया जाता है। मन्दिर सेवायत हरी घटा के पद गाते हैं तथा महिलायें मन्दिर के अन्दर मल्हार गाती हैं।

इसी प्रकार वृन्दावन के श्री बांके बिहारी जी तथा राधावल्लभ जी व अन्य मन्दिरों में हरियाली अमावस का आयोजन बड़े धूम-धाम के साथ किया जाता है। इस दिन भगवान को हरे रंग की पोशाक धारण कराते हैं तथा मल्हार, सावन के गीत आदि गाते हैं। समाज गायन होता है। किसी मन्दिर में ठाकुर जी के पास सिंधारा भी सजाकर रखा जाता है। इसी प्रकार ब्रज के अन्य स्थानों जैसे- गोकुल, महावन, कामवन, बरसाना, नन्दगाँव, गोवर्धन आदि स्थानों पर भी हरियाली अमावस का आयोजन विशेष उत्साह के साथ किया जाता है।

## हरियाली तीज

श्रावण शुक्ल पक्ष तृतीया को हरियाली तीज का त्योहार का आयोजन देवालयों में बड़े धूमधाम के साथ किया जाता है। इस दिन ब्रज में गायन-वादन, झूलन तथा उत्तम व्यंजनों के साथ हरियाली तीज का मनोरथ किया जाता है। वैसे तो आषाढ़ से आश्विन मास तक के ये चार महीने वर्षा ऋतु के अन्तर्गत आते हैं किन्तु श्रावण-भाद्रपद के बीच वाले यह दो महीने यह ऋतु पूरे अपने यौवन पर रहती है। सभी धर्म-सम्प्रदायों में वर्षा ऋतु के चारों मास धर्मोपासना के लिये सर्वोत्तम माने गये हैं। पौराणिक मान्यता के अनुसार यह चारों मास देवताओं का शयनकाल का समय होता है।

श्रावण-भाद्रपद के महीनों में ब्रजमण्डल की शोभा देखते ही बनती है। श्रावण मास के महीने में मथुरा का धार्मिक वैभव देखने लायक होता है। इस समय यहाँ सभी मन्दिरों में सजावट की जाती है। सोने-चांदी के काँच के झूले लगाये जाते हैं। रंग-बिरंगे झाड़-फानूस से मन्दिर जगमगाने लगता है। कहा जाता है- कि

शत्रुघ्न जी ने भी मथुरा की स्थापना इसी श्रावण मास के महीने में की थी। मथुरा के अतिरिक्त वृन्दावन, गोकुल, दाऊजी, नंदगांव, बरसाना, कामवन, छाता, कोसी आदि स्थानों पर भी यह उत्सव मनाया जाता है। मन्दिरों में चांदी या सोने के झूले लगाये जाते हैं। कई मन्दिरों में रास का आयोजन होता है। ठाकुरजी के प्रत्येक मन्दिरों में झाँकी के समय कीर्तनकार मल्हार और हिंडोलों का गायन करते हैं। इस वातावरण को देखकर दर्शनार्थी अत्यन्त प्रसन्न होते हैं तथा उनमें भक्ति की लहर दौड़ जाती है।

मथुरा के द्वारिकाधीश मन्दिर में हरियाली तीज के अवसर पर ठाकुर जी को हरे रंग की पोशाक धारण कराई जाती है तथा हरियाली तीज का आयोजन किया जाता है। भगवान को हरे रंग का श्रृंगार किया जाता है तथा सोने के हिण्डोले में ठाकुर जी को विराजमान करके सोने का झूला झुलाया जाता है। मन्दिर में चारों तरफ फूल-पत्तों से हरियाली की सजावट की जाती है। झूलों के सामने उद्यान, कुंज, पर्वत, कुण्ड, सरोवर और घाटों के दृश्य प्रस्तुत किये जाते हैं तथा फव्वारे चलाये जाते हैं। समस्त आयोजन दर्शनार्थियों को आनन्द प्रदान करता है। इन घटाओं के साथ-साथ भगवान के आगे हिंडोले मल्हार का कीर्तन किया जाता है।

वृन्दावन के शाहजी के मन्दिर का सजा हुआ कमरा तथा बिहारीजी का सोने के झूले में झूलना सबसे विशेष रहता है। हरियाली तीज वृन्दावन का सबसे अनोखा उत्सव है। इस दिन बिहारीजी में स्वर्ण जटित हिण्डोला लगता है तथा ठाकुरजी उसमें विराजमान होकर अपनी सभी सखियों के साथ हिण्डोले का आनन्द प्राप्त करते हैं। कहा जाता है कि स्वर्ण हिण्डोला वृन्दावन के सेठ हरगूलाल बेरीवाला द्वारा बनवाया हुआ है । बिहारीजी में सोने का झूला वर्ष में बस एक ही बार तीज वाले दिन लगता है तथा ठाकुरजी साल में एक ही बार सोने के झूले में विराजमान होते हैं। इस दिन ठाकुरजी को हरे रंग की पोशाक धारण कराते हैं तथा ठाकुरजी को सिंधारा चढ़ाते हैं। जिसे महिलायें अपने घर से लेकर आती है। जिसमें राधारानी के सोलह श्रृंगार इत्यादि शामिल रहते हैं। हरियाली तीज के अवसर पर बिहारीजी अपने गर्भगृह से बाहर आकर भक्तों को दर्शन देते हैं। ठाकुरजी को हरियाली तीज के अवसर पर विशेष व दिव्य मिठाइयों का प्रसाद लगाया जाता है। जिसमें घेवर, फैनी का मुख्य भोग है। ठाकुरजी का सोने का हिण्डोला उत्तर भारत में अत्यधिक प्रसिद्ध

है। इस दिन हजारों श्रद्धालु बिहारीजी के दर्शनों के लिये वृन्दावन में आते हैं। हरियाली तीज का मनोरथ सम्पूर्ण ब्रज क्षेत्र में बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है।

हरियाली तीज वृन्दावन का सबसे अनूठा त्योहार है। श्रावण मास में शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि को विशेष बिहारीजी को स्वर्ण हिंडोला लगता है। अपनी सखी-सहचरियों के साथ स्वर्ण हिंडोले का आनन्द लेते हैं। हरियाली तीज पर पड़ने वाला स्वर्ण हिंडोला वर्षभर में सिर्फ एक ही दिन एक ही बार सायंकालीन ही लगता है और इस ठाकुरजी को हरे रंग की विशेष पोशाक तैयार करायी जाती है। ठाकुरजी के विशेष दर्शन का एक कारण यह भी है बाँके बिहारी जी के दर्शन निज मन्दिर की बजाय जगमोहन में होते हैं, कि ठाकुरजी अपने निज स्थान से अतिरिक्त आगे होते हैं। प्रथम बार 15 अगस्त 1947 में यह झूला बिहारीजी के लिए प्रयोग में लाया गया था। स्वर्ण हिंडोले से पहले हरियाली अमावस तक ठाकुरजी के विशेष फूल बंगले बनते हैं तथा अमावस के बाद हरियाली तीज को ही ठाकुरजी अपने भक्तों को विशेष कृपामयी दर्शन देते हैं। इसके बाद ठाकुरजी अपने गर्भगृह के अन्दर ही दर्शन देते हैं। हरियाली तीज के उपरान्त बिहारीजी अपने विशेष उत्सवों पर ही बाहर आते हैं। इन दर्शनों के लिए भक्त वर्षभर तरसते हैं। यह वृन्दावन का सबसे बड़ा उत्सव है, जिसमें सबसे अधिक भीड़ रहती है।

## पवित्रा एकादशी

श्रावण शुक्ल पक्ष एकादशी को पवित्रा एकादशी का उत्सव मनाया जाता है। इस दिन मन्दिरों में ठाकुर जी को पवित्रा नाम की माला धराई जाती है। वल्लभ सम्प्रदाय में इस उत्सव का बहुत अधिक महत्व है। पवित्रा एकादशी के दिन वल्लभ कुल के ठाकुरजी का प्राकट्योत्सव मनाया जाता है। श्री महाप्रभु जी के सामने पवित्रा एकादशी के दिन ठाकुरजी का प्राकट्य हुआ। प्रभु का ये प्राकट्य गुरु के रूप में हुआ है। ठाकुर जी ने श्री महाप्रभु के द्वारा ब्रह्म सम्बन्ध का मन्त्र लिया था। इस दिन को पुष्टिमार्गीय सम्प्रदाय का जन्मदिवस मनाते हैं तथा यह उत्सव बहुत बड़ा उत्सव मनाया जाता है। अन्य मार्गीय मन्दिरों में भी पवित्रा का उत्सव

मनाया जाता है। इस दिन ठाकुरजी को पंचामृत स्नान कराके सुन्दर पीले रंग के वस्त्र धारण कराके रेशमी धागे से बनी हुई माला जिसे पवित्रा कहते हैं, वह ठाकुरजी को धारण कराते हैं तथा ठाकुरजी को आज के दिन मौसम के फल आम, जामुन आदि तथा मिठाइयां और अनेक भिन्न-भिन्न प्रकार की सामग्रियों का भोग लगाया जाता है। वृन्दावन, मथुरा के द्वारिकाधीश मन्दिर तथा गोकुल, बरसाना, नन्दगांव, कामवन इत्यादि जगहों पर भी पवित्रोत्सव बहुत धूमधाम से मनाया जाता है तथा जिन्हें वल्लभ सम्प्रदाय में ब्रह्म सम्बन्ध (गुरु दीक्षा) लेना होता है, वह आज ही के दिन ब्रह्म सम्बन्ध लेते हैं।

## रक्षा-बन्धन

सावन की भीनी मस्त कर देने वाली फुहारों की अनुभूति जनमानस में एक विशेष प्राकृतिक आनन्द का संचार कर देती हैं। इसमें मनुष्य ही नहीं बल्कि पृथ्वी के जीव-जन्तु भी प्रकृति की हरियाली एवं कदम्ब पुष्पों की भीनी सुगन्ध से आनंदित हो जाते हैं और फिर आता है रक्षा बन्धन। ब्रज में इस त्यौहार का विशेष महत्व है। श्रावण शुक्ल पक्ष पूर्णिमा को राखी का उत्सव मनाया जाता है। इस दिन को गायत्री जयन्ती के नाम से भी जाना जाता है। ब्राह्मण लोग इस दिन श्रावणी उत्सव मनाते हैं। देवालयों में भी रक्षा-बन्धन का उत्सव बहुत धूमधाम के साथ मनाते हैं। मथुरा के द्वारकाधीश मन्दिर में श्रावण मास के उत्सवों का आयोजन किया जाता है। पूरे श्रावण मास में इस मन्दिर में घटाओं का आयोजन किया जाता है। मथुरा के जन्मस्थान में भी घटाओं का आयोजन किया जाता है तथा हिंडोले भी लगाये जाते हैं। इस मास में रास का आयोजन किया जाता है। प्राय: मन्दिरों में एक दिन घटा तथा एक दिन रास का आयोजन किया जाता है।

श्रावण मास में घटाओं का क्रम से कुछ इस प्रकार से आयोजन किया जाता है श्रावण मास की कृष्णा एकादशी व त्रयोदशी के दिन केसरिया घटा तथा केसरिया रंग के झूले का आयोजन किया जाता है। अमावस को हरी घटा लगाई जाती है। श्रावण शुक्ला द्वितीया को जामुनी, तृतीया को हरियाली, चतुर्थी को आसमानी, छट को गुलाबी, अष्टमी को लाल, दशमी को श्याम, द्वादशी को लहरिया तथा चतुर्दशी

को श्वेत रंग की घटा का आयोजन किया जाता है। उत्सवों में जिस रंग की घटा होती है, उसी रंग के झूलों का आयोजन किया जाता है। रक्षा-बन्धन के दिन शुभ मुहूर्त में ठाकुर जी के मन्दिरों में भगवान को राखी बाँधी जाती है। वृन्दावन के बिहारीजी के मन्दिर में बिहारीजी महाराज को हजारों श्रद्धालु राखी अर्पित करते हैं। मन्दिर के सेवायत ठाकुरजी को राखी बाँधते हैं तथा ठाकुरजी को घेवर-फेनी का भोग लगाते हैं तथा ठाकुरजी को जरी का श्रृंगार करते हैं। वृन्दावन के शाहजी मन्दिर में बसन्ती कमरा खोला जाता है जो कि एक साल में केवल दो बार ही खुलता है।

इस दिन मन्दिर में बसंती कमरे में ठाकुरजी के हिंडोले का आयोजन किया जाता है। वृन्दावन के रंग मन्दिर में गज और ग्राह की लड़ाई के उत्सव का आयोजन किया जाता है। इस उत्सव को देखने के लिये हजारों की संख्या में श्रद्धालु इस उत्सव को देखने के लिये आते हैं। इसी तरह ब्रज के अन्य स्थानों जैसे- गोकुल, नन्दगांव, बरसाना इत्यादि जगहों पर श्रावण मास के उत्सवों का आयोजन बहुत धूमधाम से किया जाता है।

## श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

भाद्रपद कृष्ण पक्ष अष्टमी तिथि को भगवान श्रीकृष्ण का जन्म उत्सव मनाया जाता है। वैसे तो ब्रज के अलावा भी इस त्योहार का आयोजन किया जाता है किन्तु ब्रज क्षेत्र में इस उत्सव का आयोजन अत्यधिक उत्साह के साथ किया जाता है। जिस समय सिंह राशि पर सूर्य आते हैं और आकाश में मेघों का बरसना चालू हो जाता है तब भाद्रपद मास में कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि में अर्धरात्रि के समय वृष राशि में चन्द्रमा के उदय होने पर तथा रोहिणी नक्षत्र के योग में योगीराज श्रीकृष्ण का जन्म मथुरा के कारागार में माता देवकी के गर्भ से हुआ था। लेकिन कंस के डर से पिता वासुदेव अपने पुत्र श्रीकृष्ण को अर्धरात्रि में नन्द के घर छोड़कर वहाँ से योगमाया जी को लेकर आ गये थे। इसलिये जन्माष्टमी के दिन योगमाया जी का जन्मदिवस भी मनाया जाता है।

मथुरा के जन्मस्थान पर श्रीकृष्ण का जन्म का उत्सव बड़े समारोह के रूप में मनाया जाता है। मथुरा के अतिरिक्त गोकुल, महावन, दाऊजी, वृन्दावन, कोसी,

छाता, बरसाना, नन्दगांव, राधाकुण्ड, गोवर्धन, डीग, कामवन आदि स्थानों पर भी श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का उत्सव धूमधाम के साथ मनाया जाता है। मथुरा में रात को बारह बजे ठाकुरजी का जन्म कराया जाता है। ठाकुरजी को पंचामृत स्नान कराया जाता है। जिसमें घृत, दूध, दही, शहद, शक्कर तथा अनेक प्रकार की औषधि तथा सुगन्धित द्रव्य आदि से भगवान को स्नान कराया जाता है। मथुरा के द्वारकाधीश में जन्मस्थान से एक दिन पहले जन्माष्टमी का आयोजन किया जाता है तथा वहाँ पर भी ठाकुरजी का रात को बारह बजे अभिषेक कराया जाता है। इसके बाद जरी का श्रृंगार किया जाता है तथा पाग, लड्डू, धनिये की पंजीरी आदि का भोग लगाया जाता है। वृन्दावन के राधारमण मंदिर में दिन के 12 बजे ठाकुर जी का अभिषेक किया जाता है तथा ठाकुरजी को पीले रंग की पोशाक धराई जाती है। कहीं-कहीं पर खीरे से ठाकुरजी का जन्म कराया जाता है। श्रीबाँके बिहारीजी के मन्दिर में प्रात:काल मंगला होती है जो कि एक साल में एक ही जन्माष्टमी के दिन होती है। सप्तदेवालयों में भी जन्माष्टमी बहुत धूमधाम से मनायी जाती है। मन्दिरों में जन्माष्टमी के दिन माखन-मिश्री का भोग लगता है।

वृन्दावन के बिहारीजी मन्दिर में प्रत्येक वर्ष में सिर्फ एक बार ही मंगला आरती होती है। बाकी सभी दिन सिर्फ तीन आरतियाँ ही होती हैं। जिसमें श्रृंगार आरती, राजभोग आरती व शयन भोग आरती शामिल है। मंगला आरती सिर्फ जन्माष्टमी के दिन ही की जाती है। इसके लिए मन्दिर में एक प्राचीन कथा प्रचलित है। ठाकुर श्रीबाँके बिहारीजी महाराज की कई वर्ष पूर्व में मंगला आरती होती थी लेकिन एक बार एक अद्‌भुत घटना हुई जिसमें गोस्वामियों द्वारा ऐसा पाया गया जिससे मंगला आरती बंद हो गयी तथा वर्षभर तीन ही आरतियाँ होती हैं। घटना कुछ इस प्रकार थी कि बिहारीजी प्रतिदिन निधिवनराज में रास के लिए जाते थे, निधिवनराज ठाकुरजी नित्य क्रीड़ा केलिस्थली में रास के लिए आया करते थे। उस समय श्री बिहारी जी को मंगला के दर्शन देने के लिए जाया करते थे । एकबार गोस्वामियों ने पाया कि रात्रि को ठाकुरजी ने जो शयन के समय वस्त्र पहन रखे थे उनमें से कुछ वस्त्र निधिवनराज की लताओं-पताओं में लिपटे हुए तथा कुछ वस्त्र बिहारीजी के श्रीअंगों में लिपटे हुए मिले, जिससे गोस्वामियों ने पाया कि ठाकुरजी को मंगला के लिए भागना पड़ता है इसलिए ठाकुर की नित्य लीला में विघ्न न पड़े

इसलिए मंगला आरती सिर्फ साल में एक बार होती है। इस दिन ठाकुरजी का विशेष श्रृंगार किया जाता है और ठाकुरजी बालरूप में दर्शन देते हैं। इन दर्शनों के साथ ही दोपहर राजभोग तक नन्दोत्सव होता है।

वृन्दावन के श्रीराधारमण मंदिर में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी मनाने की कई विशिष्टताएँ हैं। इस मंदिर में भाद्रपद कृष्ण पक्ष सूर्योदयकालीन अष्टमी को यह उत्सव मनाया जाता है। संपूर्ण मंदिरों में अधिकांशत: यह उत्सव रात्रि 12 बजे सम्पन्न होता है जबकि श्रीराधारमण मंदिर में यह उत्सव दिन में मनाया जाता है। इसके अंतर्गत श्रीराधारमणलाल जी के श्रीविग्रह को रजत मंडल में श्वेत वस्त्रों में विराजमान करके सभी उपस्थित श्रद्धालु भक्तों के समक्ष जड़ी-बूटियों के अर्क, गो-दुग्ध, दही, गोघृत, शहद तथा शर्करा मिश्रित पंचामृत से वेदमंत्रों द्वारा अभिषेक कराया जाता है। इसके पश्चात् केशर मिश्रित गो-दुग्ध से भगवान का अभिषेक होता है। इसके पश्चात् केशर मिश्रित तीर्थ जल से श्री भगवान का शुद्धोदक स्नान अभिषेक सम्पन्न होता है। लगभग 3-4 घंटे तक चलने वाले इस महा अभिषेक की प्रक्रिया अन्य मंदिरों से भिन्न है। यहाँ दिन में अभिषेक किये जाने की परंपरा आरंभ से ही चली आ रही है। इसका कारण तो अज्ञात है किन्तु दिन में जन्माष्टमी अभिषेक की यह अनूठी परंपरा इसी मंदिर में है। अधिकांश अन्य मंदिरों में दृष्टिगोचर नहीं होती। दूसरी परंपरा में यहाँ अभिषेक सभी भक्तों के समक्ष होता है जबकि अधिकांश मंदिरों में गर्भगृह में गुप्त अभिषेक की परंपरा है। अभिषेक के पश्चात् जिन वस्त्रों को पहनकर भगवान का अभिषेक होता है उसे 'चीर प्रसाद' के रूप में भक्तों को वितरित किया जाता है।

जन्माष्टमी अभिषेक के पश्चात् 'श्रीजी' को पीले वस्त्र धारण कराये जाते हैं तथा नित्य से आज विशेष श्रृंगार होता है। टिवडी, मकराकृति कुण्डल, वेसर, लकुट, वंशी, पायल, रत्न जटित कंठहार आदि धारण कराकर आरती की जाती है। जो नित्यानी भोग श्रीजी को लगाया जाता है वही भोग लगता है तथा भक्तों की सेवा इच्छानुसार विशेष 56 भोग आदि की व्यवस्था रहती है। अभिषेक के पश्चात् श्रृंगार तथा आरती नित्यानी नियम सेवा के पश्चात् श्रीजी की शयन सेवा होती है।

## नन्दोत्सव

जन्माष्टमी के दूसरे दिन भाद्रपद नवमी तिथि को ब्रज के मथुरा, गोकुल, वृन्दावन एवं नन्दगांव सहित सभी पारम्परिक मन्दिरों में नन्दोत्सव का आयोजन अत्यन्त धूमधाम से मनाया जाता है। इस उत्सव में ढांढा-ढांढी नृत्य, जन्मोत्सव की बधाई गायन और गोप-ग्वालों का अभिनय प्रदर्शन किया जाता है। इस उत्सव को दधिकांधौ (दधि + काँधा, अर्थात् दही का कीच (कीचड़)) उत्सव भी कहते हैं।

वृन्दावन के बाँके बिहारीजी मंदिर सहित राधावल्लभ, यशोदानंदन, मदनमोहन मंदिर (भट्टजी) में भी इस उत्सव को बड़े हर्षोल्लास से मनाया जाता है। इस दिन ठाकुरजी की न्यौछावर करके रुपये, पैसे, खेल-खिलौने, खाने की वस्तु, कपड़े, बर्तन और भी अनेक सामान भक्तगण लुटाते हैं। जिसे ददखाना के नाम से जाना जाता है। वहां के गोसांईजन दधि, दुग्ध एवं हल्दी आदि वस्तुओं को मिलाकर भक्तों के ऊपर डालते हैं। इस उत्सव को देखने के लिए हजारों की संख्या में भक्तगण आते हैं। ब्रज के अन्य मन्दिरों में भी नन्दोत्सव अत्यन्त धूमधाम से मनाया जाता है। नन्दोत्सव के दिन वृन्दावन के रंग मंदिर में लट्ठे का मेला होता है। इस अवसर पर अन्तर्यामी अखाड़े के मल्ल (पहलवान) भाग लेते हैं। एक ऊँचा लट्ठा गाड़ा जाता है, जिस पर तेल-पानी का मिश्रण डाला जाता है तथा ऊपर चढ़ने वाले पहलवान को इनाम दिया जाता है। इनाम में प्राप्त ध्वजा को गोदारंग मन्नार की जय घोष को मध्य अखाड़े में स्थापित किया जाता है ।

## गणेश चौथ

भाद्रपद शुक्ल पक्ष चतुर्थी को गणेश चतुर्थी कहते हैं। इस दिन भगवान गणेश जी का जन्म दिवस माना जाता है। अग्रपूजा के रूप में प्रतिष्ठित गणेशजी का माहात्म्य अद्‌भुत है। कुछ भी शुभ कार्य हो सबसे पहले गणेश जी की पूजा अर्चना करके उनका आह्वान किया जाता है। जनमानस में इस त्यौहार को बहुत धूमधाम से मनाया जाता है। मथुरा के गणेश टीला मंदिर में सुबह से ही भक्तों की भारी संख्या में भीड़ हो जाती है। गणेश जी के मन्दिरों में सुबह से ही अभिषेक प्रारम्भ हो जाता है।

दिव्य वेदमंत्रों के उच्चारण, सुगंधित इत्र एवं औषधियों के मिश्रित जल से गणेशजी का अभिषेक किया जाता है। उसके बाद चोला चढ़ाया जाता है। इस दिन भगवान का विशेष श्रृंगार किया जाता है। मंदिरों को सजाया जाता है। सायंकाल के समय भगवान के छप्पन भोग तथा भण्डारे का आयोजन भी किया जाता है। जनमानस में इस त्यौहार की बड़ी धूम है। इस दिन छोटे बच्चों का पट्टी पूजन किया जाता है। घरों में भी मिट्टी के गणेश बनाकर उनकी पूजा की जाती है, बाद उनको गाते-बजाते जन समूह द्वारा जमुना जी में विसर्जन किया जाता है। वैसे तो यह उत्सव महाराष्ट्र में अधिक उत्साहपूर्वक मनाया जाता है किन्तु ब्रज क्षेत्र में भी इस त्यौहार को बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है।

वृन्दावन के मोटा गणेश मंदिर में गणेश चतुर्थी के दिन प्रात:काल 4 बजे दिव्य वेद मंत्रोच्चारण के साथ गणेश जी का अभिषेक होता है। इस दिन दूर्वा घास का अधिक महत्व होता है। गणेश जी पर दूर्वा चढ़ाई जाती है। पूजा के पश्चात् चट्टा बजाये जाते हैं। अत: इसे चट्टा चौथ भी कहते हैं। इस दिन भगवान गणेश जी को बूंदी के लड्डू, बेसन के लड्डू, बूंदी, बेसन के सेव आदि सामग्रियों का भोग लगाया जाता है तथा सायंकाल के समय छप्पनभोग होते हैं। इस दिन गणेश जी को गुड़धानी का विशेष भोग लगता है। वृन्दावन, मथुरा के अतिरिक्त बरसाना, नंदगांव, गोवर्धन, छाता, कोसी आदि जगहों पर भी गणेश चतुर्थी का उत्सव मनाया जाता है। कहते हैं कि इस दिन चन्द्रमा को नहीं देखना चाहिये। अन्यथा अनायास ही दोषारोपण हो जाता है।

## बलदेव छठ

भाद्रपद शुक्ल पक्ष छठ बलदेव छठ के नाम से जानी जाती है। इस दिन बलदेव ग्राम स्थित श्री दाऊजी मन्दिर में जन्मदिवस का विशेष आयोजन होता है। ब्रज में दाऊजी का जन्मदिवस बहुत धूमधाम से मनाया जाता है। कहीं-कहीं पर दाऊजी के आयुध मल्ल हल की भी पूजा होती है। इसलिये इस दिन को हल छठ के नाम से भी जाना जाता है। बलरामजी का जन्म भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष की छठ को मध्यान्ह में हुआ था। इस दिन बलदाऊजी का अभिषेक वेदमंत्रों के उच्चारण के

साथ किया जाता है। पुष्टिमार्गीय सम्प्रदाय में ठाकुरजी के जन्म के पश्चात उन्हें पंचामृत स्नान कराके सुगन्धित द्रव्य लगाते हैं। नीला वर्ण होने के कारण ठाकुर जी को नीले वस्त्र धराते हैं। किन्तु पुष्टिमार्गीय में नीला रंग निषेध है। इसलिये बलरामजी को पीले रंग के वस्त्र व आभूषण धराते हैं। ठाकुरजी को माखन-मिश्री, खीर तथा भाँग का विशेष भोग लगता है। दाऊजी में ठाकुरजी के जन्म के पश्चात् अभिषेक कराकर नीले रंग के वस्त्र धारण कराते हैं। दाऊजी में यह उत्सव बड़े समारोह के रूप में मनाया जाता है। बलदाऊजी को पालना में झुलाया जाता है तथा बधाई के पदों का गायन होता है। खीर का प्रसाद सभी भक्तगणों में वितरण किया जाता है। दाऊजी के दर्शन के लिये दूर-दूर से दर्शनार्थी दर्शन के लिये आते हैं तथा मेले का आनन्द प्राप्त करते हैं। बलदेव ग्राम से पृथक ब्रज चौरासी कोस में दाऊजी के अनेक प्राचीन मंदिर हैं। वृन्दावन, मथुरा, भांडीरवन, बठैन, महावन, माँट, भद्रवन आदि स्थलों पर भी दाऊजी के मंदिर स्थित हैं।

## राधाष्टमी

जन्माष्टमी के पश्चात् ब्रज क्षेत्र में राधाष्टमी का उत्सव मनाया जाता है। बरसाना, रावल, वृन्दावन आदि स्थानों पर बड़े आयोजन होते हैं। भादों मास के शुक्लपक्ष की अष्टमी तिथि को राधाष्टमी तथा इस दौरान होने वाले मनोरथ सहज ही लोगों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। राधाष्टमी के दिन वृन्दावन के स्वामी हरिदासजी का भी प्राकट्य उत्सव मनाया जाता है। बिहारीजी, टटिया स्थान, निधिवन में विभिन्न कार्यक्रम होते हैं सायंकाल में बिहारीजी के मन्दिर से बहुत विशाल सवारी चाव का आयोजन किया जाता है जो सम्पूर्ण वृन्दावन में भ्रमण करने के पश्चात् निधिवन के लिये प्रस्थान करती है। राधाष्टमी के दिन टटिया स्थान पर भण्डारे का आयोजन किया जाता है। जिसमें अरई प्रसाद प्रमुख है।

वृन्दावन के राधावल्लभ मन्दिर में राधाष्टमी महोत्सव की अनुपम छटा होती है। श्री जी का जन्म होता है। उसके बाद राधा जी का अभिषेक पूरे विधि-विधान से होता है। इसमें प्रचुर मात्रा में दुग्ध, दधि, शर्करा एवं घृत व शहद का उपयोग होता है। भक्त राधा रानी की जय-जयकार करते हैं। नृत्य तथा समाज गायन होता है। राधारानी के अभिषेक के दर्शन पाना श्रद्धालु अपना सौभाग्य समझते होता हैं।

श्रीविग्रह के अभिषेक बाद उन्हें पीले रंग की पोशाक धारण कराते हैं तथा जरी का श्रृंगार करते हैं। अभिषेक के पहले ठाकुरजी लाल रंग की पोशाक धारण करते हैं। दोपहर को दधिकाँधा का आयोजन होता है। मंदिर के सेवायत राधावल्लभजी की न्यौछावर करके भक्तों में कपड़े, बरतन, रुपये, पैसे आदि चीजें लुटाते हैं। बरसाने में भी राधारानी का जन्मोत्सव बड़े हर्षोल्लास से मनाया जाता है। शयन के समय बरसाना तथा वृन्दावन के मंदिर में ढांढा-ढ़ाढी नृत्य की परंपरा है। वृन्दावन में चार दिन चाव निकाली जाती है। राधाष्टमी का यह उत्सव एक हफ्ते तक चलता है। सातों दिन अलग-अलग स्थानों पर अनेक लीलायें होती हैं।

नवमी को बरसाना की मोर कुटी में मयूर नृत्य लीला होती है। इसमें श्याम मोर बनकर नृत्य करते हैं और राधारानी को रिझाते हैं।

दशमी को विलासगढ़ (बरसाना) में रास होता है।

एकादशी को राधाजी का ऊँचा गाँव में ललिता जी का स्याहुना होता है। शाम को प्रेम सरोवर में नौका विहार लीला होती है।

इसी दिन सांकरी खोर में चोटी बंधन लीला होती है।

द्वादशी को बरसाना की कुंज में महारास होता है और प्रिया कुण्ड (पीली पोखर) में नौका विहार लीला होती है।

त्रयोदशी को बूढ़ी लीला होती है। जिसे मटकी फोड़ या दान लीला भी कहते हैं।

त्रयोदशी को ही लाडिली मन्दिर में राधा रानी का छठी उत्सव मनाते हैं।

चतुर्दशी को सुनहरा की कदंबखंडी में लट सुलझावन लीला होती है।

पूर्णमासी को महारास होता है। शाम को राधाबाग में महारास होता है।

## वामन लीला

भाद्रपद शुक्ल पक्ष की द्वादशी को ब्रज के मन्दिरों में 'वामन जयन्ती' का उत्सव हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। ब्रज के ऊँचा गाँव नामक स्थान में उस दिन श्री नारायण भट्ट जी की समाधि पर 'समाज' और रासलीला होती है।"

## मटुकी लीला

भाद्रपद शुक्ल त्रयोदशी को बरसाने के निकट 'साँकरी खोर' नामक स्थान में 'मटुकी लीला' का भव्य आयोजन होता है। दो पहाड़ी टीलों के मध्य एक सँकरे (संकीर्ण) मार्ग को यहाँ 'साँकरी खोर' के नाम से जाना जाता है। ऐसी मान्यता है कि भगवान् श्रीकृष्ण इसी स्थान पर गोपिकाओं का मार्ग रोककर उनसे कर स्वरूप दान माँगा करते थे। इस खोर के दोनों ओर के टीलों में से एक पर बरसाने के तथा दूसरे पर नन्दगाँव के ब्रजवासी गोप वेश में बैठकर रसिया गाया करते हैं।

श्री प्रभुदयाल मीतल के अनुसार—"नन्दगाँव वाले कृष्ण के पक्ष में दान माँगने के रसिया गाते हैं और बरसाने वाले राधा तथा गोपियों के पक्ष में दान देने का विरोध करते हैं। इस प्रकार यह रोचक सम्वाद गायन के साथ लोकोत्सव के रूप में प्राय: दो घण्टे तक चलता है फिर राधा और गोपियाँ तथा ग्वाल-बाल का अभिनय करने वाले साँकरी खोर में जाकर दान लीला का प्रदर्शन करते हैं।

इस मेले की रोचकता उस समय देखते ही बनती है जब गोपियों द्वारा अधिक आनाकानी करने पर उनकी दधि और माखन से भरी 'मटुकी' गिराकर फोड़ दी जाती है और फिर सब उसे लूट-लूटकर न केवल खुद खाते हैं बल्कि भक्तों को भी लुटाते हैं। इस मेले को देखने के लिये बड़ी संख्या में नर-नारी यहाँ एकत्र होते हैं।

## अनन्त चौदस

भाद्रपद शुक्ल पक्ष की 14 को अनन्त चौदस का उत्सव होता है। अनन्त विष्णु का ही नाम है। अत: इस दिन उन्हीं का ही पूजन किया जाता है। ब्रज के मंदिरों में पर ठाकुरजी की विशेष झांकी होती है। ब्रज के लोकजीवन में इस दिन को एक त्योहार के रूप में मनाया जाता है। महिलायें इस दिन व्रत रखती हैं। इस अवसर पर एक धागे में चौदह गाँठें बाँधकर उसका पूजन किया जाता है। ऐसा विश्वास है कि अनन्त चौदस का व्रत करने से सभी मनोकामनायें पूर्ण होती हैं।

# साँझी उत्सव

आश्विन मास के पितृ पक्ष का सबसे प्रसिद्ध उत्सव साँझी है। इसे ब्रज में लोक-त्योहार और कलात्मक प्रदर्शन आदि कई रूपों में सम्पन्न किया जाता है। साँझी ब्रज की एक लोक देवी है। साँझी को सायंकाल के समय पूजा जाता है। इसलिये इसका नाम साँझी पड़ गया है। ब्रज में साँझी पूजन धूमधाम से किया जाता है। ब्रज के धर्माचार्यों ने साँझी को राधा-कृष्णोपासना से भी जोड़ दिया है। इसके कलात्मक रूप की झाँकी ब्रज के मन्दिर-देवालयों में मिलती है।

भाद्रपद की पूर्णिमा से आरम्भ होकर आश्विन की अमावस्या तक ब्रज में साँझी का उत्सव होता है। ब्रज के हर घर, हर मन्दिर में साँझी बनायी जाती है। कुंवारी कन्या घरों में साँझी बनाती हैं और सायंकाल के समय उसकी पूजा और आरती करती हैं तथा भोग लगाती हैं। घरों में प्राय: दीवाल पर साँझी बनायी जाती है। ब्रज के मन्दिरों और सांस्कृतिक स्थलों में सूखे रंगों तथा कागज के साँचों पर विविध प्रकार के सूखे रंगों को छिड़ककर उनके द्वारा बेल-बूटे, फूल-पत्ती, पशु-पक्षी, कुण्ड-सरोवर, नगर-गाँव आदि का चित्रण किया जाता हैं। इनके साथ देव-मूर्तियों और श्रीकृष्ण लीला के विविध प्रसंग भी चित्रित किये जाते हैं। यह उत्सव पितृ पक्ष के 16 दिनों तक ब्रज में मनाया जाता है।

वृन्दावन के राधारमण मंदिर, राधावल्लभ मंदिर, भट्टजी के मंदिर व अन्य मन्दिरों में साँझी का आयोजन किया जाता है। मन्दिरों में साँझी के पद भी गाये जाते हैं। पुष्टिमार्गीय सम्प्रदाय के मन्दिरों में भी सांझी का उत्सव मनाया जाता है। इन दिनों में ठाकुरजी के सम्मुख संध्या के समय तरह-तरह की कलापूर्ण साँझी सजायी जाती हैं। विभिन्न रंगों से केले के पत्तों को काटकर उनसे नित्य नई ब्रज की लीला का भूमि पर चित्रण किया जाता है। अमावस्या को फूलों की सांझी होती है। उसमें रंग-बिरंगे फूलों का गलीचा बनाया जाता है। गहरे थाल में जल भरकर जल की ऊपरी सतह पर रंगों से चित्र बनाते हैं। दूसरे थाल में जल के भीतर चित्र बनाते हैं। ये रंग जल में फैलते नहीं हैं। ऐसे चित्रों को बनाने की एक विशेष कला होती है। जिसे मन्दिरों में एक साधारण सेवक भी आसानी से बना लेते हैं। वृन्दावन के अतिरिक्त मथुरा, गोकुल, नन्दगांव आदि स्थानों पर भी साँझी का उत्सव मनाया जाता है। अन्य

मंदिरों में भूमि पर रंग की सांझी, जल की सांझी, केले के पत्तों की साँझी, फूलों की साँझी और घरों में बनने वाली गोबर की साँझी में ब्रजवासियों का एक विशेष स्थान है। मंदिरों में सायंकाल के समय साँझी की आरती होती है तथा उन्हें भोग भी लगाया जाता है। इन दिनों ठाकुरजी को रंगीन पोशाक धारण कराई जाती है।

सांझी का शाब्दिक अर्थ है साज-सज्जा-सजावट आदि। एक उपाख्यान के अनुसार जब श्रीकृष्ण वन में गौ चराने जाते थे तथा पूरे दिन गौचारण के बाद जब श्रीकृष्ण ग्वालबालों के साथ सायंकाल गौधूलिबेला में वापस आते थे तो श्रीराधारानी ब्रजगोपियों के सहयोग से श्रीकृष्ण के साथ ग्वाल मंडली के स्वागत में फूलों तथा रंगों की रंगोली श्रीकृष्ण के वापस आने वाले मार्ग में बनाकर उन्हें सम्मान के साथ अपना प्रेम तथा समर्पण व्यक्त करती थीं चूँकि यह लीला सायंकाल सम्पन्न होती थी। अत: इसे इस कारण भी सांझी कहा जाता है।

मंदिरों में इसके बनने के आरंभकाल का प्रारंभिक इतिहास तो उपलब्ध नहीं होता है किन्तु यह उत्सव ब्रजलीला से संबंधित है। अत: इसे ब्रज के मंदिरों में श्रीकृष्ण के गोचारण से वापस आने के समय सायंकाल मंदिरों में बनाया जाता है। यह विशेष रूप से ब्रज में ही होने वाला उत्सव है। ब्रज के बाहर अधिकांशत: देखने-सुनने को नहीं मिलता। वृन्दावन के भी कुछ मंदिरों में ही होता है।

सांझी का धीरे-धीरे काफी कलात्मक विकास हुआ है। आज जो सांझी बनती हैं, उनमें कला का उत्कृष्ट प्रदर्शन होता है। यह अष्टकोणीय वेदी पर सूखे रंगों के माध्यम से विभिन्न प्रकार की जटिल ज्यामितीय बेलों-बूटों से बारीकी से तैयार किया जाता है तथा केन्द्र में कोई श्रीराधाकृष्ण की लीला अंकित की जाती है। इसमें विशिष्ट कला का प्रदर्शन करने वाले सांझी के कलाकार इसे पानी के ऊपर तथा पानी के अंदर भी बनाकर अपना कला-कौशल श्री भगवान को अर्पण करते हैं। हमारे यहाँ सांझी का 200 वर्ष पुराना इतिहास मिलता है। स्व॰ श्री गोपीलाल गोस्वामी ने इसे यहाँ आरंभ किया था। यह श्रीजी की सेवा सुख माना जाता है तथा यह एक धार्मिक अनुष्ठान है। इसमें सांझी को श्रीराधारानी का स्वरूप मानकर इसका पूजन किया जाता है। इस विषय में एक पद्यांश भी प्रचलित है—

*मन वांछित फल पाइये जो कीजै या सेव,*
*सुनहुँ कुंवरि वृषभानु की यह सांझी सांचौ देव॥*

# शारदीय नवरात्रि उत्सव

आश्विन शुक्ल प्रतिपदा से लेकर नवमी तिथि तक के नौ दिनों में नवरात्रि उत्सव की धूम देश के सभी भागों में रहती है। बंगाल का तो यह सर्वाधिक प्रमुख उत्सव है। ब्रज-क्षेत्र में भी इन नौ दिनों तक घर-घर में देवी की स्थापना कर श्रद्धा-भक्ति के साथ उनका पूजन किया जाता है। प्राय: नर-नारी व्रत भी रखते हैं। 'दुर्गा सप्तशती' और 'देवी भागवत' आदि ग्रंथों का पाठ भी भक्तगण करते हैं।

पूर्णावतार श्रीकृष्ण एवं रस-रासेश्वरी श्रीराधारानी के अवतार काल से अद्यावधि तक संपूर्ण ब्रज में ब्रजवासी जो कुछ भी उपासनात्मक क्रियाएँ करते हैं वे इन्हीं श्रीयुगल के प्रति समर्पित होती हैं, किन्तु ब्रज में भी इस युगल उपासना के अतिरिक्त श्रीकृष्ण को प्राप्त करने हेतु भगवती दुर्गा की श्रीकात्यायनी स्वरूप में उपासना होती है। इसका प्रमाण श्रीमद्भागवत में वर्णित है— गोपियों ने द्वापर में श्रीकृष्ण को पति रूप में प्राप्त करने के लिये श्रीयमुना के कमनीय कूल पर बालुका से श्रीकात्यायनी माँ का श्रीविग्रह स्थापित करके मार्गशीर्ष माह में उपासना की थी—

*कात्यायनी महामाये महायोगिन्वधीश्वरी।*
*नन्द गोप सुतं देविं पतिं मे कुरु ते नम:॥*

*(श्रीमद्भागवत)*

उक्त श्लोक में गोपियों ने महामाया कात्यायनी से नन्द गोप सुत (श्रीकृष्ण) को पति रूप में प्राप्त करने की प्रार्थना की है। उक्त प्रकरण का तात्पर्य है कि भगवती कात्यायनी की उपासना से गोपी (जीव) श्रीकृष्ण (ब्रह्म) को प्राप्त कर सकी। अगर तत्व रूप में कहा जाय तो भगवती कात्यायनी जीव को ब्रह्म का साक्षात्कार (मिलन) कराने में सक्षम है। इसी धारणा के कारण ब्रज में आज तक दुर्गा उपासना प्रचलित है।

इसी वृत्तान्त के अनुसार श्रीधाम वृन्दावन में माँ कात्यायनी का भव्य मंदिर है। जिसमें महिष मर्दिनी के रूप में माँ कात्यायनी की भव्य प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। जहाँ नित्य प्रति बंगाल की पूजा पद्धति के अनुसार पूजा-अर्चना होती है किन्तु वर्ष

में चार बार होने वाली नवरात्रियों में चैत्र की बासन्ती दुर्गा पूजा तथा आश्विन की शारदीय दुर्गा पूजा का उत्सव विशेष रूप से मनाया जाता है। जिसमें शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को कलश स्थापन के साथ माँ कात्यायनी का प्रतिदिन षोडशोपचार पूजन होता है तथा भव्य श्रृंगार के साथ माँ भगवती के दर्शन होते हैं। इन नौ दिनों की विशेष अवधि में भगवती की आराधना हेतु शतचण्डी यज्ञ का विशेष आयोजन होता है। शाक्त तंत्र साहित्य के अनुसार—

*प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी, तृतीयं*
*चन्द्र घंटेति, कूष्मांडेति चतुर्थकं, पंचमं स्कंद मातेति,*
*षष्ठं कात्यायनीति च, सप्तमं कालरात्रिति, महागौरीति*
*चाष्टम, नवमं सिद्धि दात्री च नव दुर्गा प्रकीर्तिता॥*

उक्त श्लोक के अनुसार प्रथम दिन शैलपुत्री, द्वितीय दिन ब्रह्मचारिणी, तृतीय दिन चंद्रघंटा, चतुर्थ-कूष्मांडा, पंचम-स्कंदमाता, षष्ठ-कात्यायनी, सप्त-कालरात्रि, अष्ट- महागौरी तथा नवम-सिद्धिदात्री का नवरात्रि के पावन दिनों में क्रमशः विशेष पूजन का विधान है। श्रीवृन्दावनस्थ कात्यायनी मंदिर में सर्वाधिक विशेष आकर्षण संधि पूजा आरती होती है। संधि यानी मिलन- अर्थात जब अष्टमी तिथि का नवमी तिथि से मिलन होता है तब उस संधिकाल में माँ कात्यायनी का विशेष पूजन होता है, जिसमें विद्वान अर्चक माँ भगवती की समस्त शक्तियों तथा चौसठ योगिनियों का तान्त्रिक विधि से पूजन करते है। हालांकि यह समस्त पूजन मंदिर के गर्भगृह में परदा लगाकर होता है तथा दर्शनार्थियों को इसके दर्शन नहीं होते किन्तु पूजन के पश्चात् होने वाली विशेष संधि आरती का सभी भक्तों को दर्शन होता है । अपार श्रद्धालु दर्शन लाभ प्राप्त करते हैं। कात्यायनी मंदिर का विशेष आकर्षण है। इसके पश्चात् नवमी को शतचण्डी यज्ञ की बलिदान आदि के साथ पूर्णाहुति होती है तथा माँ भगवती कात्यायनी का विशेष प्रसाद भंडारे में भक्तों को प्रदान किया जाता है। अष्टमी तथा नवमी को हलुआ, चना का विशेष भोग लगता है तथा कहीं अष्टमी कहीं नवमी के दिन बलि दी जाती है। नारियल, जायफल, काशीफल, पेठा आदि में से एक की बलि दी जाती है।

मथुरा में इन नौ दिनों में मुख्य आयोजन महाविद्या, कैंट बिजलीघर, पुराना बस स्टैण्ड के पास बगलामुखी मन्दिर, चामुण्डा, गायत्री तपोभूमि, चर्चिका, मँगनी

माता (माता गली), भैंस बहोरा स्थित कैला माता, गऊ घाट स्थित महालक्ष्मी माता आदि मन्दिरों में होते हैं और फूल बँगला आदि बनाये जाते हैं।

शारदीय नवरात्र में ब्रज में कुमारी कन्याएँ न्यौरता करती हैं। नवरात्र आरम्भ होन से एक दिन पूर्व वह दीवार पर मिट्टी से सुन्दर न्यौरता बनाती है। प्रतिदिन प्रात:काल उनका पूजन करती है। गीत गाती है। न्यौरता के रूप में गौरी पूजन कर वर की प्राप्ति की कामना करती हैं।

## दशहरा (विजय दशमी)

आश्विन शुक्ला दशमी को विजयादशमी होती है। इस दिन दुर्गा पूजा व नवरात्र की पूर्णाहुति होती है। आश्विन शुक्ला दशमी को दशहरा या अपराजिता दशमी भी कहते हैं। इस दिन भगवान राम ने रावण का वध करके लंका पर विजय प्राप्त की थी। इसलिये इस दिन को विजयादशमी कहते हैं। इसी उपलक्ष्य में यह त्योहार मनाया जाता है। यह क्षत्रियों का बहुत बड़ा त्योहार है। अब यह अनेक रूपों में सभी वर्गों अथवा जातियों के नर-नारियों द्वारा मनाया जाता है। यह शक्ति पूजा अथवा वीर पूजा से सम्बन्धित त्योहार है। इस दिन शमी वृक्ष की पूजा की जाती है। दशहरा के दिन अस्त्र-शस्त्रों की सफाई करके, उनकी विधिवत पूजा करके उनका भव्य प्रदर्शन किया जाता है।

जनसाधारण में दशहरा एक प्रसिद्ध लोकोत्सव अथवा जनप्रिय त्यौहार के रूप में मनाया जाता है। इस दिन मंदिरों में अच्छे-अच्छे पकवानों से ठाकुरजी का भोग लगाया जाता है। ठाकुर जी के विशेष दर्शन होते हैं। ठाकुरजी को लाल रंग की पोशाक धराई जाती है तथा उन्हें शस्त्र धारण कराए जाते हैं। सायंकाल में दशहरा के पद का गायन किया जाता है। ब्रज क्षेत्र में यह उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। ब्रज में वैसे भगवान की पूजा ग्वाले के रूप में होती है। पर दशहरा के दिन भगवान क्षत्रिय वेश में भक्तों को दर्शन देते हैं। इस दिन ठाकुर जी के आगे ढाल-तलवार रखी जाती है।

नवरात्रि के समय मिट्टी में जौ बोया जाता है। नवमी तक ये अंकुर बढ़कर दूर्वा घास की भाँति हो जाते हैं। दशमी को इस दूर्वा को एक साथ बाँधकर ठाकुरजी

के श्रीमस्तक पर तिलक किया जाता है। इसे जवारा कहते हैं। ठाकुरजी को जवारा धराने के पश्चात् अपने गुरुजनों को जवारा धराकर प्रणाम करने की परम्परा है। जवारा विजय का सूचक है।

श्रीरामचन्द्रजी लंका पर विजय प्राप्त करके आये तब ऋषियों ने मांगलिक वस्तुओं से उनका अभिषेक किया। उसके बाद मंगलसूचक जवारा धराकर माथे पर तिलक किया यही परम्परा अभी तक चली आ रही है। भगवान को जवारा धराने के पश्चात् उनकी न्यौछावर की जाती है और उसके बाद आरती की जाती है।

## शरद पूर्णिमा

भारतीय संस्कृति में चैत्र से फाल्गुन पर्यंत बारह पूर्णिमा प्रतिमाह क्रम से आती हैं किन्तु शरद पूर्णिमा की रात्रि का महत्व अलग ही है। इसी रात्रि को रासेश्वर श्रीकृष्ण ने अपनी आल्हादिनी शक्ति श्रीराधा को रासेश्वरी शब्द से संबोधित करते हुए गोपियों के साथ अनेक रूपों में वासना रहित महारास किया। इस शरद की रात्रि में कुछ तो विशेषता होगी— यह महारास किसी और रात में भी हो सकता था। इसके लिए पूर्ण ब्रह्म श्रीकृष्ण ने इसी रात्रि को क्यों चुना, यह एक चिन्तनीय बिन्दु है।

ग्रीष्म ऋतु के आगमन पर प्रकृति की अधिकांश वनस्पति गर्मी के कारण झुलस कर समाप्त प्राय: सी हो जाती है वनस्पतियों के बीज वायु के झोंकों की तीव्र गति से दूर-दूर तक बिखर जाते हैं। उन पर मिट्टी की परतें चढ़ जाती हैं। इस भीषण गर्मी के प्रकोप से सभी जीव-जन्तु क्लान्त हो जाते हैं। इसके पश्चात् जब वर्षा ऋतु का आगमन होता है तो पृथ्वी की तपन कम होती है । शीतलता होने पर सभी के मन मयूर नृत्य करने लगते हैं। इसी बीच पृथ्वी में मिट्टी के अंदर पड़े वनस्पतियों के बीज अंकुरित होकर, वर्षा ऋतु के चार माह में बड़े होकर यौवन प्राप्त कर लेते हैं। ऐसा आयुर्वेद का सिद्धान्त है कि वर्षा ऋतु में सभी काष्ठादि औषधियाँ रसविहीन यानी गुणविहीन हो जाती हैं यानी उन औषधियों में उनकी जीवनी औषधीय शक्ति नहीं रहती। इसी प्रकार जो नवीन वनस्पति उगती हैं वह भी औषधीय गुणों से न्यून होती हैं। किन्तु जब शरद पूर्णिमा की रात्रि में चन्द्रोदय होता है तो वह उन सभी नवीन प्रस्फुटित वनस्पतियों में अपनी चन्द्र किरणों से रस वृष्टि

करके उनके औषधीय गुणों को अमृत तुल्य बना देता है। जिसके कारण सेवन करने वाले व्यक्ति को आरोग्य प्राप्त होता है। आयुर्वेद की मान्यता है कि शरद पूर्णिमा की रात्रि में चन्द्रमा अमृत वृष्टि करता है। उस रात्रि में चन्द्रमा का प्रकाश भी अन्य पूर्णिमाओं की अपेक्षा अधिक तीव्र होता है। यही कारण है कि आज भी अनेक व्यक्ति तथा आयुर्वेद शास्त्री शरद रात्रि को दूध, चावल तथा मिश्री मिलाकर खीर बनाते हैं तथा उसे रात भर चन्द्रमा के प्रकाश में रखकर उस औषधियुक्त खीर का सेवन रोगियों को कराते हैं। यह कई रोग व्याधियों की अचूक चिकित्सा है। चन्द्रमा को रसराज कहा गया है। इस शरद रात्रि में मनुष्यों को वस्त्रविहीन होकर अमृततुल्य चन्द्र किरणों का आवश्यकतानुसार सेवन करना चाहिये तथा अपलक चन्द्रमा की ओर देखना चाहिये। इससे नेत्र रोग दूर होते हैं तथा ज्योति बढ़ती है। चन्द्रमा की इन्हीं अमृत किरणों द्वारा ब्रजगोपियों को आरोग्य प्रदान करने हेतु भी श्रीकृष्ण ने इस दिन वासना रहित महारास किया। शरद रात्रि के चन्द्रमा की सुन्दरता का वर्णन अनेक साहित्यकार कवियों ने अपने साहित्य में रूप सौन्दर्य के पर्यायवाची के रूप में किया है। वास्तव में अमृत वृष्टि के साथ ही अप्रतिम सौन्दर्य साम्राज्ञी है यह शरद पूर्णिमा।

आश्विन मास का अंतिम त्यौहार शरद पूर्णिमा है। इस दिन ब्रज में जगह-जगह रासलीला का आयोजन होता है। शरद पूर्णिमा को सम्पूर्ण ब्रज कृष्ण और राधामय हो जाता है। दूध की खीर बनाकर चांदनी रात में आँगन में रख दी जाती है। लोक विश्वास है कि इस दिन अमृत बरसता है इसलिये खीर को आगन में रखते हैं और अगले दिन सुबह के समय खाते हैं। रासलीला की रौनक ब्रज को स्वर्ग लोक से भी सुन्दर स्वरूप प्रदान करती है। इसी दिन ठाकुरजी ने महारास किया था यों तो आश्विन शुक्ल पक्ष पूर्णिमा को शरद पूनो-रासोत्सव मनाया जाता है। पर पाँच दिन पहले अर्थात् एकादशी से ही मन्दिरों में रास के पद आरम्भ हो जाते हैं। सुबह ठाकुर जी के मंगला दर्शन के बाद से नित्य प्रति रास के पद गाये जाते हैं।

शरद पूर्णिमा का पावन उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। शरद की रात्रि को चन्द्रमा पूरी आभा से प्रकाशित होकर पृथ्वी पर मानो अमृत की वर्षा करता है। द्वापर युग में भगवान श्रीकृष्ण ने इसी रात को ब्रज की गोपियों के साथ महारास किया था। ब्रज के देवालयों में यह उत्सव बड़े समारोह के रूप में सम्पन्न होता है।

इस अवसर पर ठाकुरजी को श्वेत वस्त्र धारण कराये जाते हैं तथा ठाकुरजी को दूध एवं दूध से बनी सामग्री भोग में लगाई जाती है। मंदिर प्रांगण को सफेद रंग से सजाया जाता है। शरद के पदों का गायन होता है। वृन्दावन के सप्त देवालयों में भी यह उत्सव अत्यन्त धूमधाम से आयोजित किया जाता है। शरद पूर्णिमा से ही सप्त देवालय में कार्तिक नियम सेवा शुरू हो जाती है। कहते हैं कि भगवान शंकर भी इस महारास को देखने के लिये गोपी बनकर वृन्दावन आये थे। इसलिये यहाँ भगवान शंकर गोपेश्वर कहलाये थे। सप्त देवालय के अतिरिक्त श्रीबाँकेबिहारी जी के मन्दिर में भी शरद पूर्णिमा मनायी जाती है। इस दिन ठाकुरजी अपने गर्भ गृह से जगमोहन में विराजते हैं तथा साल में एक बार आज ही के दिन भगवान मुकुट वंशी, छड़ी धारण करते हैं। भगवान को श्वेत श्रृंगार किया जाता है। श्वेत रंग की सामग्री का भोग लगता है। वृन्दावन के अन्य मन्दिरों में भी महा उत्सव मनाया जाता है। वृन्दावन के अतिरिक्त मथुरा, नन्दगांव, गोकुल, बरसाना आदि स्थानों पर भी यह आयोजन होता है।

## अहोई अष्टमी

कार्तिक कृष्णा अष्टमी को यह त्योहार मनाया जाता है। स्त्रियाँ दीवार पर अहोई अंकित कर रात्रि को उसकी पूजा करती हैं। इस दिन सभी स्त्रियाँ व्रत भी रखती हैं। यह व्रत सन्तान की दीर्घायु की कामना से किया जाता है। अहोई के पास गन्ना, घड़ा और पुजापा आदि रखा जाता है। पुजापे में विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ, फल, फूल आदि के एक-एक, दो-दो टुकड़े किसी सकोरे कागज या थैली में इकट्ठे कर रखे जाते हैं।

यक्षिणी द्वारा बच्चों के संहार करने जैसी क्रूर प्रकृति देने संबंधी एक बौद्ध कथा से भी इस त्योहार का संबंध जोड़ा जाता है।

इस दिन रात्रि को राधाकुण्ड में भारी मेला भी लगता है। अष्टमी की मध्यरात्रि में दंपति संतान की कामना से राधाकुण्ड में स्नान करते हैं। मान्यता है कि मध्यरात्रि में स्नान करने पर संतान की प्राप्ति होती है।

## धन तेरस

कार्तिक मास के आरम्भ होते ही सर्दी का आरम्भ हो जाता है। हल्की-हल्की ठंडी हवा चलती है जो मन को नई स्फूर्ति प्रदान करती है। इस समय दिन सुहाना और रातें ठंडी होती हैं। ऐसे में कुछ त्योहार ब्रज क्षेत्र में मनाये जाते हैं। कार्तिक के कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी को धनतेरस का त्यौहार मन्दिरों में अत्यन्त उत्साह के साथ सम्पन्न किया जाता है। इस अवसर पर यमुना किनारे दीपदान किया जाता है। इस दिन नये बर्तन व सोना खरीदना शुभ माना जाता है। रात के समय दीपदान भी किया जाता है। इस दिन आयुर्वेद के प्रतिष्ठाता धनवन्तरि जी का जन्मदिवस भी है। इसी उपलक्ष्य में धनवन्तरि जी का पूजन करते हैं तथा समस्त मानव समाज के स्वास्थ्य लाभ की कामना करते हैं। लोक में धन तेरस के दिन धन की लक्ष्मी की पूजा की जाती है पर ब्रज के गोप-ग्वालों का धन तो उनकी गाय हैं। इस दिन ग्वाले अपनी-अपनी गायों को, बछड़ों को सजाकर उनकी पूजा करते हैं। गायों को नंद द्वारा पर लाकर खेल खिलाते हैं। गायें बढ़-चढ़कर खेलती कूदती हैं। कृष्ण भक्तों ने इस उत्सव को भी कृष्ण लीला से सम्बन्धित कर दिया है। इस दिन ब्रज के मन्दिरों में विशेष झाँकी होती है व धन तेरस के पदों का गायन किया जाता है।

## नरक चौदस (छोटी दीपावली) रूप चौदस

कार्तिक कृ० 14 को यह त्योहार होता है। इस दिन अहोई अष्टमी की पूजा में रखी हुई गगरी के जल से स्नान किया जाता है। स्त्रियाँ उबटना करती हैं और विशेष प्रसाधन सामग्री का उपयोग करती हैं। यह त्योहार समस्त परिवार की स्वास्थ्य वृद्धि के लिये मनाया जाता है। इसे छोटी दीपावली के नाम से भी जाना जाता है। ग्रामीण स्त्रियाँ सायंकाल को दीये जलाकर घूरे और चौराहे पर रखती हैं। पौराणिक कथा के अनुसार इस दिन भगवान कृष्ण ने नरकासुर का वध किया था। अत: इसे नरक चतुर्दशी भी कहते हैं। ब्रज के मन्दिरों में इस दिन विशेष दर्शन होते हैं तथा पद गायन भी किया जाता है ।—

*न्हावत सुत कों नन्दरानी।*
*मानत पर्व रूप चौदस कौ, तिलक उवटनो करि हरषानी॥*
*बस्तर लाल जरी आभूषन, पहिरावत रुचि सौं मनमानी।*
*मेवा ले, चले गान सिंगारन, ब्रजजन देखि-देखि विहँसानी॥*

इस दिन छोटी दीवाली मनायी जाती है। इसका सम्बन्ध नरक के स्वामी यमराज से है। इस दिन चार बत्तियों के दीपक को जलाकर पूर्व की ओर मुख करके दान किया जाता है। कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी के दिन ही हनुमान जयन्ती का उत्सव मनाया जाता है। इस दिन मन्दिर के सेवायत प्रातः स्नान करके हनुमानजी का षोडशोपचार पूजन करते हैं। गन्ध पूर्ण तेल में सिन्दूर मिलाकर हनुमानजी पर चोला चढ़ाते हैं। उसके बाद पुष्प के साथ नैवेद्य में घृतपूर्ण चूरमा या घी में सेंके हुये और शक्कर मिले हुये आटे का मोदक, अमरूद आदि फल अर्पित करते हैं।

लंका पर विजय के बाद श्रीराम अयोध्या आये। उस दिन सीताजी ने हनुमानजी को अपने गले की माला पहनाई, किन्तु उसमें रामनाम न होने के कारण हनुमानजी संतुष्ट नहीं हुये। तब सीताजी ने अपने ललाट पर लगा सौभाग्य सिन्दूर प्रदान करते हुये कहा कि इससे ज्यादा महत्व की मेरे पास कोई वस्तु नहीं है। तुम इसे सहर्ष धारण करके अजर-अमर रहो। यही कारण है कि कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को हनुमज्जन्म-महोत्सव मनाया जाता है तथा उन्हें तेल-सिन्दूर चढ़ाया जाता है। कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी को सायंकाल मेष लग्न में शिवजी ने अपने इष्टदेव की सेवा करने के लिये अवतार ग्रहण किया।

*कार्तिक कृष्णा चतुर्दश्यां मौमेस्वासां कपीश्वरः।*
*मेष लग्नेञ्जनागर्मात् प्रादुर्भूतः स्वयं शिवः॥*

इस दिन सायंकाल के समय हनुमानजी का पूजन किया जाता है। उसके पश्चात उनकी विशेष आरती होती है तथा 'जय सियाराम, जय सियाराम' का कीर्तन होता है। सायंकाल के समय भगवान जी की सवारी भी निकलती है। छोटी दीपावली के अवसर पर मन्दिरों में दीपदान किया जाता है।

# दीपावली (लक्ष्मी पूजन)

कार्तिक कृ० 15 अमावस्या को दीपावली का उत्सव अत्यधिक धूमधाम से मनाया जाता है। दीपावली हमारा प्राचीन धार्मिक उत्सव, सांस्कृतिक समारोह और लोक-प्रसिद्ध त्योहार है, इसे वैश्य वर्ण का प्रमुख उत्सव माना जाता है किन्तु सभी वर्ण और जातियों के लोग इसे बड़े उत्साह से मनाते हैं। ब्रज के घर-घर में यह उत्सव बड़ी उमंग के साथ मनाया जाता है। उस दिन सभी लोग नये-नये वस्त्र पहनते हैं और सायंकाल के समय लक्ष्मी गणेश दीपावली का पूजन करते हैं। दीपावली की रात्रि में खूब दीपदान किया जाता है। बच्चे पटाखे, फुलझड़ी चलाकर मनोविनोद करते हैं। सब लोग पकवान, मिठाई आदि स्वादिष्ट पदार्थों खाते हैं और एक दूसरे को मिठाई भेजते हैं। व्यापारी वर्ग के लोग इस दिन से नये वर्ष का आरम्भ करते हैं।

दीपावली का पर्व कार्तिक अमावस्या के दिन मनाया जाता है किन्तु यह वस्तुतः धनतेरस से शुरू होकर अमावस्या तक चलता है। इन तीन दिनों में दीपावली विधान का कारण यह है कि भगवान विष्णु ने इन्हीं तीन दिनों में दैत्यराज बलि से तीनों लोक लेकर उसे पाताल भेजा था। उसके दान से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने जब उससे वर माँगने को कहा तो उसने कहा भगवान! आपके दर्शन के बाद मुझे और कोई आकांक्षा नहीं रही किन्तु आपके आदेश से मैं यह वर मांगता हूँ कि इन तीन दिनों में जो प्राणी दीपदान करेगा वह यम यातना से मुक्त रहेगा और उसके घर लक्ष्मी निवास करेगी। इस दिन भगवान विष्णु क्षीर सागर में आनन्द से सोते हैं। दीपावली को दीवाली, दीपमाला आदि नामों से जाना जाता है। इसी दिन कौमुदी-महोत्सव मनाया जाता है। यह उत्सव लक्ष्मी जी के आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आदिदैविक तीनों स्वरूपों को प्रकट करने वाला है। भगवती के इन रूपों की पूजा होती है। झोंपड़ियों से लेकर महलों तक की सफाई करके भगवती का आवाहन किया जाता है। दीपावली उत्सव की मुख्य विशेषता लक्ष्मी जी की पूजा करना और दीपकों का जलाना है। धन की अधिष्ठात्री देवी की पूजा अत्यन्त प्राचीनकाल से प्रचलित है।

ब्रज के विविध धार्मिक स्थलों और मन्दिरों में दीवाली को एक महत्वपूर्ण धार्मिक उत्सव के रूप में मनाया जाता है। गोवर्धन में मानसी गंगा के चारों ओर के घाटों पर इस दिन हजारों दीपक जलाये जाते हैं और गिर्राज जी की पूजा की जाती है। ब्रज के मन्दिरों में ठाकुरजी को हटरी में विराजमान कर पूजन किया जाता है। इस दिन ठाकुरजी का विशेष श्रृंगार किया जाता है और मन्दिर प्रांगण में सजावट की जाती है। इस अवसर पर ठाकुरजी के समक्ष पद गाये जाते हैं।

गोवर्धन के अतिरिक्त ब्रज के अन्य स्थानों गोकुल, नन्दगाँव, बरसाना इत्यादि पर भी दीपोत्सव का आयोजन धूमधाम से होता है। वृन्दावन के सप्त देवालय में कार्तिक नियम सेवा का आयोजन होता है तथा यहाँ पर श्री काली माता के वेश में मामान घोष को दर्शन प्रदान लीला होती है तथा दीप पंक्तियों से मन्दिर की सजावट होती है। ठाकुर राधावल्लभलाल जी दीपावली के दिन चौपड़ खेलते हैं तथा उनका जरी का श्रृंगार किया जाता है व दीपकों से मन्दिर को सजाया जाता है। दर्शनार्थी दीपदान करते हैं।

ब्रज में यह उत्सव पाँच दिन तक मनाया जाता है। जो धनतेरस से प्रारम्भ होता है। इस दिन आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि समुद्र मंथन से निकले थे। इसलिये यह दिन धन्वन्तरि दिवस भी कहलाता है। इस दिन नये बर्तन खरीदना शुभ माना जाता है। नरक चतुर्दशी या छोटी दीपावली दूसरे दिन होती है। इस दिन श्रीकृष्णा ने नरकासुर का वध किया था। तीसरे दिन दीपावली का मुख्य त्यौहार सम्पन्न होता है। इस दिन प्रमुख रूप से श्री संपदा की अधिष्ठात्री देवी महालक्ष्मी और कुबेर की पूजा की जाती है। ऐसी भी मान्यता है कि राम जब लंका को जीतकर अयोध्या लौटे तो प्रसन्नता में दीप जलाकर उनका स्वागत किया गया था। चौथे दिन अन्नकूट-उत्सव मनाया जाता है। इस दिन भगवान कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत उठाकर ब्रजवासियों की रक्षा की थी और इन्द्र का घमण्ड चूर किया था। यमद्वितीया को भाई-बहन यमुना में स्नान करते हैं। यमद्वितीया को दीपावली पंचोत्सव का समापन होता है। यह दिन भाईदूज के रूप में भी जाना जाता है। इस पवित्र दिन में बहन भाई को टीका करती हैं और उसके दीर्घायु होने की कामना करती हैं। कहते हैं कि इस दिन जो यमुना में स्नान करता है। उसके पास यम नहीं फटकता है। इस दिन विभिन्न मिठाइयों तथा खील, बतासे, खिलौने आदि का भोग लगाया जाता है।

# गोवर्धन पूजा व अन्नकूट

दीपावली का दूसरा दिन अन्नकूट के नाम से मनाया जाता है। ब्रज क्षेत्र में गोवर्धन में यह त्योहार बहुत उत्साह से मनाया जाता है। कृष्ण सम्बन्धी पर्व होने के कारण ब्रज के सभी मंदिरों को सुन्दर सजाया जाता है तथा भगवान को छप्पन भोग लगाए जाते हैं। गोवर्धन पर्वत की पूजा व परिक्रमा भी की जाती है। कार्तिक शु० प० पड़वा को गोवर्धन पूजा का उत्सव मनाया जाता है। यह ब्रज का अत्यन्त महत्वपूर्ण लोकप्रिय त्योहार है। पहले ब्रज में इन्द्र की पूजा होती थी। श्रीकृष्ण ने उसके स्थान पर गोवर्धन स्वरूप गिरिराज की पूजा प्रचलित की थी। उनके लिये विविध प्रकार के व्यंजन इतने प्रचुर मात्रा में प्रस्तुत किये जाते थे कि वे अन्न के कूट से जान पड़ते थे। उसी परम्परा में गोवर्धन पूजा और अन्नकूट का यह उत्सव होता है जो प्राचीनकाल से ब्रज में प्रचलित रहा है। ब्रज की विशेषता उसके गो-धन के कारण रही है। यह उत्सव गोवंश के सम्वर्धन का है। इसलिये इसे ब्रज में अत्यन्त धूमधाम और समारोहपूर्वक मनाया जाता है।

इस दिन ब्रज के घर-घर में गायों की पूजा की जाती है। गोबर से बनाई गई गोवर्धन-गिरिराज की आकृति को पूजा जाता है और नाना प्रकार के व्यंजनों से अन्नकूट का आयोजन कर ठाकुरजी का भोग लगाया जाता है। इस अवसर पर ब्रज के सभी देवालयों में, समस्त वैष्णव सम्प्रदायों में गोवर्धन पूजा और अन्नकूट उत्सव होते हैं। इस दिन ब्रज के गोवर्धन ग्राम में श्री गिरिराज जी का पूजन, अन्नकूट उत्सव और परिक्रमा की जाती है। मथुरा के द्वारिकाधीश जी के मन्दिर में यह उत्सव बड़े समारोह के रूप में होता है। इस दिन गोवर्धन-पूजा और कीर्तन आदि के अतिरिक्त जो विशाल अन्नकूट होता है उसमें छप्पन भोग छत्तीसों व्यंजन प्रत्यक्ष रूप में दिखायी देते हैं। इस आयोजन के वृहद रूप का अनुमान इसी से किया जा सकता है कि इसकी तैयारी आश्विन शुक्ल पक्ष दशमी (विजयादशमी) से कार्तिक कृ० पक्ष 15 (दीपावली) तक होती रहती है। 21 दिनों में अगणित भोज्य पदार्थ बनाये जाते हैं। जिनका भव्य प्रदर्शन कार्तिक शु० पड़वा को अन्नकूट के रूप में किया जाता है। इस उत्सव से जहाँ ब्रज में गो-वंश की वृद्धि करने की प्रेरणा मिलती है, वहीं पाक विद्या की प्रगति करने का प्रोत्साहन मिला है। अन्नकूट के कारण ही ब्रज में पाक

विद्या अत्यन्त समुन्नत रूप में अभी तक जीवित है।

ब्रज के भक्त कवियों ने इस उत्सव से सम्बन्धित अनेक छोटे-छोटे पदों की रचना की है। उनमें गोवर्धन पूजा के मनोरम कथन के साथ अन्नकूट के बहुसंख्यक व्यंजनों का नामोल्लेख किया है—

गोवर्धन पूजा कों आये सकल ग्वाल ले संग।
बाजत ताल-मृदंग-शंख-ध्वनि, वीना-परह-उपंग॥
नव सत चर्ली ब्रज-तरूनी, अपने-अपने रंग।
गावत गीत मनोहर वानी, उपजत तान तरंग॥
अति पवित्र गंगाजल लैके, डारत आनंदकन्द।
ता पाछै दूध धौरी को, डारत 'गोकुलचन्द'॥
रोरी चन्दन चर्चन करिकै, तुलसी-पुहौपमाल पहिरावत।
धूप-दीप विचित्र भाँतिन सों, पीत वसन ऊपर लै उड़ावत॥
भाजन भरि-भरि कै कुरवरौ, लै-लै गिरि को भोग धरावत।
गाय खिलाय गोपाल तिलक दै, पीठ थाप सिर पेच बधावत॥
यह विधि पूजा करि के मोहन, सब ब्रज को आनन्द बढ़ावत।
जय-जय शब्द होत चहुँ दिसि तै, गोविन्द विमल-विमल जस गावत॥

ब्रज के लोक-जीवन में गोवर्धन-गिरिराज की पूजा का महत्व दीपावली के त्योहार से भी अधिक माना जाता है। इसलिये लोक कवियों ने गाया है— दूल्है गिरिराज की दुलहिन है। इस पूजा के लिये घरों व मन्दिरों के आँगन व चौक में गोबर से गोवर्धन-गिरिराज की आकृति बनाई जाती है। यह आकृति मानवाकार की होती है। उसका एक हाथ ऊपर की ओर उठा हुआ होता है। जो श्रीकृष्ण के गिरिराज-धारण का प्रतीक है। उसके चारों ओर रूई के फाहे लगी हुई सींख गाढ़ दी जाती हैं। जो गिरिराज के वृक्षों को सूचित करती हैं। उस आकृति की टुंडी में बड़ा सा छेद कर उसमें दूध, दही, शहद, खील, बतासे भरे जाते हैं और उसके सिर की ओर दीपक जलाया जाता है। गोवर्धन जी की बड़ी आकृति के पास छोटी-छोटी आकृति भी बनाई जाती हैं। वे गूजरी, ग्वालिन, मथनियाँ, चूल्हा, चक्की, लड़ावनी आदि की प्रतीक होती हैं।

गोबर से बनी हुई इस आकृति को खीर, पूरी, अठावरी और मिष्ठान्न से पूजा जाता है तथा फिर परिक्रमा करते हैं। इस समय सब लोग घण्टा, घड़ियाल बजाकर आरती उतारते हैं और श्री गिरिराज महाराज की जय बोलकर प्रसाद लेते हैं। इस अवसर पर ब्रज के मन्दिरों में खासतौर पर गोवर्धन ग्राम में, ब्रजवासीगण सामूहिक रूप से लोकगीत गाते हैं तथा पद गायन भी करते हैं। गाते समय बीच-बीच में बोलो श्री गिरिराज महाराज की जय का आनन्दपूर्ण घोष करते हैं।

छप्पन भोग और अन्नकूट गिरिराज गोवर्धन को लगाया जाता है। ब्रजवासियों की रक्षा, इन्द्र के घमण्ड का दमन करने हेतु भगवान् श्रीकृष्ण ने सात वर्ष की बाल आयु में गिरि गोवर्धन को अपनी कन्नि उँगली पर उठाया था। इस प्रकार इन्द्र द्वारा घनघोर जलवृष्टि से समूचे ब्रजमण्डल की रक्षा की। गोवर्धन-पूजन से पूर्व समस्त ब्रजवासियों ने अत्यधिक अन्न का ढेर लगाया था और अन्न यानि दाल-चावल-सब्जियों आदि का पर्वत बन गया। इसलिये उसे अन्नकूट यानि अन्न और कूट यानि-पर्वत अर्थात् अन्न का पर्वत अन्नकूट कहा जाता है। भगवान् ने सात दिवस तक गिरि गोवर्धन उठाकर रखा तब ब्रजवासियों ने प्रेम व हर्षोल्लास से अष्टयाम सेवा के अन्तर्गत एक दिन में आठ बार भोग लगाकर रखा जो सातवें दिन 8×7=56 छप्पन भोग हो गये। इस प्रकार भगवान् गिरिराज महाराज को अन्नकूट-छप्पन भोग अर्पण किया जाता है।

श्रीमद्भागवत् के अनुसार प्रारम्भ में समस्त ब्रजवासीगण वर्षा के लिए इन्द्र पूजा के हेतु आहुति के रूप में ढेर सारा अन्न व नाना प्रकार के व्यंजनादि बनाते थे, तब भगवान् ने बाल लीला के अन्तर्गत इन्द्र की पूजा को बन्द करवाया। सर्वोच्च परब्रह्म भगवान् श्रीकृष्ण के गिरिराज स्वरूप के साक्षात् दर्शन करके ब्रजवासी अत्यन्त आनन्दित हुये। भगवान् श्रीकृष्ण ने लीला अन्तर्गत गिरि गोवर्धन को अपनी कनिष्ठ उँगली पर उठाकर एक दिव्य सन्देश यह भी दिया कि केवल भगवान् की शरण में आने मात्र से समस्त प्रकार की मुश्किलें स्वत: दूर हो जाती हैं। श्रीगिरिराजस्वरूप के मनमोहक दिव्य दर्शन के अन्तर्गत उनके भक्तों का यह भी मत रहा है कि भगवान् को मालूम था कि ब्रजवासी अत्यन्त भोले हैं, कलियुग में अन्न-जल की कमी हो जायेगी और इन्द्र की पूजा के अन्तर्गत ये ब्रजवासीगण अन्न को स्वाहा-स्वाहा कर देंगे, इसलिये अन्नकूट व छप्पनभोग के माध्यम से

अन्न-संरक्षण का भी सन्देश जगत् को दिया। बाल पराक्रम के द्वारा इन्द्र को यह दिखा दिया कि ब्रज की तरफ देखना भी नहीं और गिरिराज लीला पश्चात् भगवान् को महारास के द्वारा प्रेम का दिव्य सन्देश सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को देना था, इसलिये गिरिराज-स्वरूप की अति ललित छवि से सम्पूर्ण ब्रजवासियों सहित ब्रह्माण्ड को वशीभूत कर लिया, ताकि रास में अपने दिव्य सन्देश से अवगत कराया जा सके।

श्रीराधादामोदर मन्दिर में गोवर्धन पूजा का अलग ही विधान है। इस मंदिर में गोबर के गिर्राजजी नहीं बनाये जाते हैं । इसका कारण स्पष्ट है– मन्दिर सिंहासन पर साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण जी द्वारा श्रील सनातन गोस्वामीपाद को प्रदत्त श्रीगिरिराज चरणशिला विराजमान है। इस दिव्य शिला पर भगवान् के श्रीचरण, गौ-खुर, लकुटि एवं वंशी अंकित हैं। इसी कारण गोबर के गिरिराजजी बनाने का विधान पुरातन से मन्दिर में नहीं है।

मन्दिर में अन्नकूट-छप्पनभोग में विशेष यह है कि मन्दिर के जगमोहन पर पारम्परिक ढंग से चावल का कूट यानि पहाड़ बनाकर विभिन्न खाद्य सामग्री से सजावट की जाती है। विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ एवं ब्रज की पारम्परिक खाद्य सामग्री एवं व्यंजन तथा छप्पन भोग जिसके अन्तर्गत नाना प्रकार के ब्रज की पारम्परिक मिठाइयाँ और व्यंजन सम्मिलित किए जाते हैं।

संध्या बेला में दर्शन पश्चात् उपस्थित समस्त भक्तगण मन्दिर प्रांगण में बैठकर कच्चा प्रसादम् (चावल-दाल-सब्जी-पापड़-खीर आदि) लेकर आनन्दित होते हैं।

श्रीराधादामोदर मन्दिर में पुरातन एवं विधि-विधान के अन्तर्गत वस्त्र धारण का भी विधान निश्चित है। अन्नकूट-छप्पन भोग के दिवस सप्ताह के वार के अनुसार नवीन पोशाक धारण करायी जाती है। सामान्यत: वार के अनुसार सोमवार को श्वेत, मंगल को गुलाबी, बुध को हरा, बृहस्पतिवार को पीत, शुक्रवार को श्वेत, शनि को नीला एवं रविवार को लाल रंग की पोशाक धारण कराई जाती है। पूर्णिमा के दिन श्वेत एवं अमावस्या को काली पोशाक धराते हैं।

गोवर्धन पूजा के दिन प्रात: 8 बजे तक दर्शन व परिक्रमा बन्द कर दी जाती है और पूर्ण सजावट व व्यवस्था के साथ दोपहर 2 बजे दर्शन पुन: खोले जाते हैं जो शाम 4 बजे तक होते हैं। प्रात: बेला में श्री गिरिराज चरण शिला का दुग्धाभिषेक

होता है और उपस्थित भक्तों को पंचामृत का वितरण कर दिया जाता है। ठा० श्रीराधादामोदर जी महाराज का नवीन पोशाक सहित गिरिराज स्वरूप में श्रृंगार होता है। मन्दिर प्रांगण में श्रीहरिनाम संकीर्तन उपस्थित भक्तगणों द्वारा किया जाता है और मन्दिर की 4 परिक्रमा लगायी जाती हैं।

सामान्यत: अन्नकूट छप्पनभोग में चावल, कढ़ी, दाल, खीर, पापड़, रोटी, पूड़ी, मठरी, ब्रज की पारम्परिक मिठाईयों सहित 36 व्यंजन शामिल होते हैं। नाना प्रकार के पकोड़े, बाजरे की खिचड़ी एवं अन्य व्यंजन आदि सहित मेंसूर पाक, बालूशाही, चन्द्रकला, लड्डू, बूँदी, बर्फी, मोहनथाल, जलेबी, खीरसा, पेड़ा, खुरचन, रसगुल्ला, राजभोग, गुलाब जामुन आदि-आदि सम्मिलित होते हैं।

## गोपाष्टमी

गाँवों के बालक जरा बड़े होते ही अपनी गायों को लेकर वन में गाय चराने जाते हैं। वहाँ सारा दिन सब मिल-जुलकर खाते-पीते हैं। आनन्द मनाते हैं। संध्या को गोधूलि बेला में अपने घर लौटते हैं। जहाँ मातायें उनकी प्रतीक्षा में बैठी रहती हैं। बालकों को सकुशल घर पर आया देखकर आरती उतारती हैं। राई-नोन से नजर उतारती हैं। प्रथम बार गोचारण के लिये जाते समय बालकों को एवं उनकी माता को वही आनन्द प्राप्त होता है जो नगर के बालकों को पहली बार पाठशाला जाते समय अनुभव होता है।

कार्तिक शुक्ल पक्ष अष्टमी को ब्रज में गोपाष्टमी उत्सव का आयोजन किया जाता है। यह भगवान श्रीकृष्ण द्वारा गोचारण किये जाने की स्मृति में मनाया जाता है। इस दिन ब्रजवासीगण अपनी गायों को नहला-धुलाकर और विविध रंगों से चित्रित कर उनका श्रृंगार करते हैं। फिर कृष्ण-बलराम की सवारी निकलती है। यह उत्सव मथुरा और गोकुल में विशेष आयोजन के साथ मनाया जाता है। वहाँ पर गोशालाओं की सैकड़ों गायों का भव्य प्रदर्शन किया जाता है।

इस दिन ब्रज के मन्दिरों में विशेष आयोजन किया जाता है। गोचारण के पद गाये जाते हैं। इस दिन ठाकुरजी को गोचारण की पोशाक तथा छड़ी धारण कराते हैं और ठाकुरजी सभी भक्तों को नटवर भेष में दर्शन देते हैं। ठाकुरजी को अनेक

होता है और उपस्थित भक्तों को पंचामृत का वितरण कर दिया जाता है। ठा० श्रीराधादामोदर जी महाराज का नवीन पोशाक सहित गिरिराज स्वरूप में शृंगार होता है। मन्दिर प्रांगण में श्रीहरिनाम संकीर्तन उपस्थित भक्तगणों द्वारा किया जाता है और मन्दिर की 4 परिक्रमा लगायी जाती हैं।

सामान्यत: अन्नकूट छप्पनभोग में चावल, कढ़ी, दाल, खीर, पापड़, रोटी, पूड़ी, मठरी, ब्रज की पारम्परिक मिठाईयों सहित 36 व्यंजन शामिल होते हैं। नाना प्रकार के पकोड़े, बाजरे की खिचड़ी एवं अन्य व्यंजन आदि सहित मेंसूर पाक, बालूशाही, चन्द्रकला, लड्डू, बूँदी, बर्फी, मोहनथाल, जलेबी, खीरसा, पेड़ा, खुरचन, रसगुल्ला, राजभोग, गुलाब जामुन आदि-आदि सम्मिलित होते हैं।

## गोपाष्टमी

गाँवों के बालक जरा बड़े होते ही अपनी गायों को लेकर वन में गाय चराने जाते हैं। वहाँ सारा दिन सब मिल-जुलकर खाते-पीते हैं। आनन्द मनाते हैं। संध्या को गोधूलि बेला में अपने घर लौटते हैं। जहाँ मातायें उनकी प्रतीक्षा में बैठी रहती हैं। बालकों को सकुशल घर पर आया देखकर आरती उतारती हैं। राई-नोन से नजर उतारती हैं। प्रथम बार गोचारण के लिये जाते समय बालकों को एवं उनकी माता को वही आनन्द प्राप्त होता है जो नगर के बालकों को पहली बार पाठशाला जाते समय अनुभव होता है।

कार्तिक शुक्ल पक्ष अष्टमी को ब्रज में गोपाष्टमी उत्सव का आयोजन किया जाता है। यह भगवान श्रीकृष्ण द्वारा गोचारण किये जाने की स्मृति में मनाया जाता है। इस दिन ब्रजवासीगण अपनी गायों को नहला-धुलाकर और विविध रंगों से चित्रित कर उनका श्रृंगार करते हैं। फिर कृष्ण-बलराम की सवारी निकलती है। यह उत्सव मथुरा और गोकुल में विशेष आयोजन के साथ मनाया जाता है। वहाँ पर गोशालाओं की सैकड़ों गायों का भव्य प्रदर्शन किया जाता है।

इस दिन ब्रज के मन्दिरों में विशेष आयोजन किया जाता है। गोचारण के पद गाये जाते हैं। इस दिन ठाकुरजी को गोचारण की पोशाक तथा छड़ी धारण कराते हैं और ठाकुरजी सभी भक्तों को नटवर भेष में दर्शन देते हैं। ठाकुरजी को अनेक

प्रकार के मिष्ठान्नों का भोग लगाया जाता है। यह उत्सव सप्त देवालयों में भी अत्यन्त धूमधाम से मनाया जाता है। कार्तिक शुक्ला अष्टमी को यह पर्व मनाया जाता है। गोमाता के शरीर के रोम-रोम में सब देवता तथा गोबर में लक्ष्मी तथा गोमूत्र में गंगा का निवास है। अत: गोमाता जीवन को पवित्र करने वाली समस्त शुभ फल देने वाली है। इस दिन गोमाता की पूजा करके गुड़, चने की दाल, मिष्ठान्न खिलाना चाहिये तथा मेंहदी या रंग से शरीर को जगह-जगह रंग कर उनकी चरण रज मस्तक पर धारण करनी चाहिये। इस दिन प्रात:काल गायों को स्नान कराके गंध-पुष्पादि से उनका पूजन करते हैं और अनेक प्रकार के वस्त्रों से अलंकृत करके गायों को गो-ग्रास देकर परिक्रमा करते हैं। सायंकाल जब गायें चरकर वापस लौटती हैं तो उनका पूजन किया जाता है। इस दिन का सम्बन्ध गौपालन से है। इसलिये ग्वालों को विशेष महत्व दिया जाता है।

कार्तिक शुक्ला अष्टमी को बालकृष्ण प्रथम बार गौ चराने निकलते हैं। बालक को स्नान कराकर, सजा सँवार कर, वेद मन्त्रों के साथ सबका आशीर्वाद लेने के पश्चात् ही माता गौचारण के लिये कन्हैया को भेजती है। घर में उत्सव का माहौल हो जाता है। अत: वैष्णव सम्प्रदाय के मन्दिरों में इस उत्सव को बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। इस दिन मथुरा में मेला लगता है।

## अक्षय नवमी

ज्योतिषीय गणना के अनुसार कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को 'अक्षय नवमी' की संज्ञा प्राप्त है तथा इसे हिन्दू जनमानस में विशेष श्रद्धा के साथ मनाया जाता है। इसका कारण इसकी धार्मिक विशेषता है। इस दिन चतुर्युगी के प्रथम युग 'सत्ययुग' का यह प्रथम स्थापना दिवस है। कार्तिक शुक्ल नवमी बुधवार को प्रथम प्रहर, श्रवण नक्षत्र, वृद्धि योग में सत्ययुग का प्रारंभ हुआ। इसकी आयु 1728000 वर्ष थी। इसमें श्रीनारायण के मत्स्य, कच्छप, वराह तथा श्री नृसिंह ये 4 अवतार हुए। श्री मत्स्यावतार ने शंखासुर को मारकर श्री ब्रह्मा को वेद लाकर दिये। श्री कच्छप रूप में भगवान ने मंदराचल पर्वत को अपनी पीठ पर रखकर समुद्र मंथन से चौदह रत्न प्रकट किये। श्री वराह अवतार में हिरणाक्ष का वध करके

पृथ्वी का उद्धार किया तथा श्री नृसिंहावतार में हिरण्यकशिपु का वध करके श्री प्रहलाद की रक्षा की। इस युग में धर्म अपने चारों पादों में स्थिर था। स्वर्ण पात्र तथा मुद्रा में रत्नों का प्रयोग था। इच्छित वर्षा होती थी, पृथ्वी सम्पूर्ण शस्य तथा रत्नों से परिपूर्ण थी, ब्राह्मण चारों वेदों के ज्ञाता, सत्यभाषी-परद्रव्य, परस्त्री, परागमुख तथा त्यागी होने के साथ शाप तथा वरदान देने में सक्षम होते थे। स्त्रियाँ पतिव्रता होती थीं, शासक वर्ग न्यायपरायण तथा प्रजा का औरस पुत्र की तरह पालन करते थे। वैश्य लोग-सत्यवक्ता, धर्मात्मा तथा शूद्र सेवा धर्म में निरत रहते थे। प्रधान तीर्थ पुष्कर था। श्री प्रहलाद आदि दैत्यवंशीय राजाओं की तीनों लोकों में पहुँच थी अर्थात् यह दिवस धार्मिक दृष्टिकोण से बहुत प्रभावशाली है। इस दिन को भारतीय जनमानस विशेष मान्यता देता है।

इसके अतिरिक्त कालान्तर में इसी विशेष दिवस को श्री निम्बार्क संप्रदाय में भी विशेष स्थान प्राप्त है। इस अक्षय नवमी के ही दिन श्री निम्बार्क संप्रदाय प्रवर्तक श्री हंस भगवान, श्री सनकादिक ऋषियों एवं श्री सर्वेश्वर भगवान का प्राकट्य दिवस मनाया जाता है। यह दिवस श्री निम्बार्क संप्रदाय के सभी मंदिरों में विशेष समारोहपूर्वक मनाया जाता है। इस दिन उक्त सभी श्री विग्रहों का पंचामृत महाभिषेक करके विशेष पीत वस्त्रों को धारण कराकर श्रृंगार के बाद महाआरती होती है तथा मोहन भोग का विशेष भोग लगाकर विशेष उत्सव मनाया जाता है। इस दिन को भारतीय जनमानस में ''वेद स्थापना दिवस'' के रूप में भी मनाया जाता है। इस दिवस में इतनी विशेषता होने के कारण ही जनमानस में इस दिवस को विशेष महत्व देते हुए अनेकों प्रकार से अपनी सामर्थ्य के अनुसार दान पुण्य आदि किये जाते हैं।

ब्रज में इस दिन मथुरा, वृन्दावन तथा गरुड़ गोविन्द (तीन वन परिक्रमा) की परिक्रमा की जाती है । इसे युगल जोड़ी परिक्रमा के नाम से भी जाना जाता है। श्रीकृष्ण स्वरूप मथुरा, श्रीराधा स्वरूप श्री वृन्दावन तथा नारायण स्वरूप श्रीगरुड़ गोविन्द की श्रद्धालु यमुना स्नान करके श्रद्धापूर्वक परिक्रमा लगाकर दान-पुण्य के साथ अक्षय पुण्य प्राप्त करते हैं। ऐसी मान्यता है कि इस दिन किये हुए धार्मिक कार्यों का, दान-पुण्य का कभी किसी प्रकार क्षय नहीं होता इसीलिये इस पुण्य बेला को अक्षय नवमी के नाम से सुशोभित किया गया है।

# देवोत्थान एकादशी

कार्तिक मास का एक अन्य अत्यन्त लोकप्रिय त्योहार देवउठान एकादशी है। देवउठान एकादशी का यह त्योहार गर्मी के अन्त व सर्दी के आरम्भ की मिलन बेला का त्योहार है। इसे देवोत्थान या देवठान भी कहते हैं। इस दिन क्षीर सागर में शयन कर रहे विष्णु भगवान को पूजा अर्चना द्वारा उठाया जाता है। इस दिन तुलसी और सालिग्राम का घर-घर और मन्दिरों में ब्याह रचाया जाता है। घर व देवालय विभिन्न भूमि अलंकरणों से सजाये जाते हैं। घर के भीतर चौक को सुबह ही पूर कर बड़ी डलिया से ढक देते हैं। शाम को मण्डप बनाकर चौक पर खड़ा कर दिया जाता है तथा पटले पर श्रीकृष्ण तथा समीप तुलसी का विरवा रख दिया जाता है। पूजा की सामग्री के साथ पाँच या सात घी के दीये एक थाल में रखकर आरती उतारते जाते हैं और कहते जाते हैं।

*उठो देव, बैठो देव, पावरिया चटकाओ देव।*
*क्वारों का ब्याह करो ब्याहों का गौना करो देव।*
*गौनन को छोरा करों सुखी करो देव।*

तत्पश्चात कहीं-कहीं तुलसी के विरवे का शालग्राम के साथ विधिवत ब्याह रचाया जाता है। गन्ना, सिंघाड़े, शकरकन्द, चावल, मिठाई, फल व फूल से पूजा करके दीपक जलाये जाते हैं। आषाढ़ मास शुक्ल पक्ष की एकादशी देवशयनी एकादशी कहलाती है। तब से चार मास तक विवाह आदि शुभ कार्य नहीं होते हैं। कार्तिक मास शुक्ल पक्ष एकादशी को देव जागते हैं। देवोत्थान होता है और यह प्रबोधिनी एकादशी कहलाती है। हल्का जाड़ा आरम्भ हो जाता है। ऋतु अनुसार सेवा में भी उसी प्रकार का साज-सामान आ जाता है। ठाकुरजी को गद्दल उढ़ाना आरम्भ हो जाता है। सम्मुख में अँगीठी से गर्माई दी जाती है। रंग-बिरंगे रंगों से मंडप माँडकर ईख के गन्नों का मंडप बनाकर उसमें ठाकुर जी विराजते हैं। दीपक जलाये जाते हैं। रात्रि जागरण होता है। यही ठाकुरजी के विवाह का दिन माना जाता है।

इस दिन ब्रज के नर-नारी व्रत रखते है तथा मथुरा, गरुड़ गोविन्द और वृन्दावन की परिक्रमा करते हैं। ब्रज के मन्दिरों में इस दिन विशेष उत्सव किया

जाता है। वर्षा ऋतु के चातुर्मास में सोये हुए देवतागण उस दिन जाग्रत हुए माने जाते हैं। इसलिये जो विवाहादि मांगलिक कार्य चार महीनों से बन्द थे, वे प्रबोधिनी के दिन देवताओं के उठने से फिर से होने लगते हैं। इस दिन को देवोत्थान अथवा देवठान भी कहा जाता है।

इस दिन ब्रज की नारियाँ अपने घरों को लीप-पोत कर खरिया मिट्टी और गेरू से सुन्दर चित्र बनाती हैं। लोक चित्रकला का अच्छा प्रदर्शन होता है। सायंकाल के समय स्त्रियाँ देवोठान का रेखांकन कर और उसके निकट नवीन ऋतु फल, बेर, सिंघाड़े, गन्ना तथा पकवान रखकर उन्हें एक थाली या डलिया से ढक देती हैं। फिर बाल-बच्चों सहित उसके पास बैठकर देवताओं को जगाने का आह्वान करती हैं। कार्तिक शुक्ल 11 को ब्रज में तुलसी-शालिग्राम के विवाह का लोकोत्सव होता है। इस दिन देवालय में पूजित शालिग्राम शिला के साथ स्त्रियाँ अपनी तुलसी विवाह का आयोजन करती हैं। उसमें लोक प्रचलित सभी वैवाहिक विधियों का पालन करते हुये तुलसी के पौधे के साथ शालिग्राम शिला के फेरे डाले जाते हैं। इस अवसर पर विवाह के गीत गाये जाते हैं।

ब्रज के मन्दिरों में यह त्योहार बहुत धूमधाम के साथ मनाया जाता है। इस दिन ठाकुरजी को नव अलंकृत पोशाक धारण कराई जाती है। संध्या के समय इक्षु कुंज में शालिग्राम देव स्वरूप का अभिषेक किया जाता है तथा विशेष आरती पूजन किया जाता है। रजत रथ पर शालिग्राम जी की विजय यात्रा होती है तथा उन्हें अनेक प्रकार की मिठाइयां व अन्य पकवानों का भी भोग लगाया जाता है। यह उत्सव वैष्णव सम्प्रदायों के अतिरिक्त गौड़ीय सम्प्रदायों के मन्दिरों में भी अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न किया जाता है।

## कार्तिक पूर्णिमा

कार्तिक शु॰ 15 को कार्तिक पूर्णिमा बहुत बड़ा पर्व है तथा इसे ब्रज में बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है। यह चातुर्मास व्रत का अन्तिम मास है इसको ब्रह्मा, विष्णु, शिव अंगिरा और आदित्य आदि ने महापुनीत पर्व प्रमाणित किया है। अत: इस मास में किये हुये स्नान, दान, होम यज्ञ आदि का अनन्त फल प्राप्त होता है। कहते हैं कि इस दिन सायंकाल के समय मत्स्यावतार हुआ था। इस मास में गंगा

और यमुना में स्नान व दीपदान का विशेष महत्व है। एक माह तक स्त्रियाँ प्रात:काल सवेरे यमुना स्नान करके प्रभाती और हरजस गाती हैं। स्नान के पश्चात वे बालू के गौरा और महादेव बनाकर पूजा करती हैं। तुलसी की पूजा होती है। इनके गीत गाये जाते हैं। कार्तिक स्नान सम्बन्धी गीत बड़े मधुर और भावपूर्ण हैं। राधा कृष्ण एवं शिव पार्वती की प्रणय कथा इन गीतों में विशेष रूप से रहती है। कार्तिक स्नान में तुलसी पूजा का विशेष महत्व है।

कार्तिक मास में प्रात:काल जल में डुबकी लगाने और सायंकाल दीप जलाने का बड़ा महत्व है। जल में डुबकी लगाकर लोग गहराई की अनन्तता और आकाशदीप जलाकर अनन्त ऊँचाई को ढूँढ़ते हैं। कहा जाता है कि इसी तिथि को पुराण-प्रसिद्ध गज-ग्राह का जीवन-मरण युद्ध गंगा-गंडकी के संगम पर हुआ था। इसी दिन भगवान विष्णु ने धरती पर उतरकर गज का उद्धार किया था। गज-ग्राह का युद्ध न्याय और सदाचार का प्रतीक है। भगवान के द्वारा गज का उद्धार इस बात की ओर संकेत करता है कि ईश्वर धर्म का साथ देते हैं। भक्तों पर कृपा करते हैं।

प्रत्येक पूर्णिमा आशाओं को पूर्ण करने वाली होती है। इसीलिये सत्यनारायण का व्रत इसी दिन विशेष होता है। कार्तिक मास भगवान को अधिक प्रिय है। ये पूर्णिमा सर्वाधिक श्रेष्ठ फलदायिनी है। चान्द्रायण व्रत, कार्तिक स्नान व्रत इसी दिन पूर्ण होते हैं। तीर्थों में स्नान दान का विशेष महत्व है तथा हरिहर यात्रा, पुष्कर यात्रा आदि का विशेष महत्व माना है। सब देवों ने भी इसको महत्व दिया है। इस दिन व्रत एवं विष्णु पूजन तीर्थ स्नान-दान अवश्य करना चाहिये। कृतिका नक्षत्र से युक्त पूर्णिमा का कार्तिकेय (स्कन्द) दर्शन तथा कृपा का विशेष महत्व माना है। पद्म पुराण के अनुसार इसी दिन मत्स्यावतार हुआ है तथा इसी दिन त्रिपुर राक्षस शिवजी के द्वारा मारा गया तथा तीनों पुर ध्वस्त किये गये। इसलिये शिवजी का नाम त्रिपुरारि नाम पड़ा। इस दिन रात्रि में दीपदान भी करना चाहिये।

ब्रज के चैतन्य सम्प्रदाय के मन्दिरों में इस दिन चैतन्य महाप्रभु का प्राकट्य उत्सव मनाया जाता है। इस दिन भगवान को रत्न जड़ित आभूषण, पीली पोशाक आदि धारण कराए जाते हैं तथा ऋतु के अनुसार फल, मिठाइयां एवं मेवाओं का भोग लगाया जाता है। प्राकट्य उत्सव के दिन मोहन भोग का विशेष भोग लगाया जाता है।

# कार्तिक नियम सेवा

बहुप्रतीक्षित नियम सेवा एवं ठाकुरजी के लीला श्रृंगार महोत्सव की दीर्घ श्रृंखला का शुभारम्भ हो चुका है। श्रृंगार लीला के अन्तर्गत भगवान ठा0 श्रीश्यामसुन्दर जी महाराज ने अपने भक्तों को विविध लीलाओं के दर्शन देकर उन्हें द्वापरकालीन लीला भाव से अभिभूत कर दिया। प्रतिदिन नव-नवायमान लीला दर्शन करते हुये भक्तों की उत्सुकता शान्त होती-होती पुनः प्रबल हो उठती है कि कल क्या लीला करेंगे। कुछ लीला सूची का अवलोकन करते तो कुछ मन्दिर प्रबन्धन समूह से प्रश्न करते। प्रचुर मात्रा में भक्तों ने सम्पूर्ण लीला श्रृंगार श्रृंखला के दर्शन दिये। बहुत से भक्त यात्री अपनी सीमित समयावधि से प्रतिबद्ध होने के कारण यथा उपलब्ध अवसर का सदुपयोग कर सके। ऐसे भक्त आह्लादित थे दर्शन करके और कुछ नैराश्य से पीड़ित भी, क्योंकि वे सम्पूर्ण लीला दर्शन नहीं कर पाये।

ठाकुर जी की होली लीला में ठाकुर-ठकुरानी अबीर-गुलाल और पिचकारी कमोरी लिये हुये थे तो झूलन लीला में श्रावण मास का आभास करा रहे थे। श्रीमती राधारानी से मिलन को ठाकुरजी का बाजीगर वेश में श्याम वस्त्र धारण कर बाजीगर के प्राचीन उपकरण लिये दर्शन करके ठाकुर को भक्त सख्य भाव एवं ऐश्वर्य भाव से मिश्रित भावों से देख रहे थे क्योंकि जब साधारण बाजीगर अपने चमत्कार दिखाता है तो दर्शक अचम्भित हो जाते हैं किन्तु जब अखण्ड कोटि ब्रह्माण्ड नायक भगवान ने बरसाने में वृषभानु राधा के प्रासाद प्रांगण में बाजीगरी दिखाई होगी तो क्या चमत्कार नहीं हुआ होगा।

इसी क्रम में भगवान शिव के वेश में महारास हेतु आगमन लीला के दर्शन देकर भक्तों को प्रफुल्लित कर रहे थे। श्री देव प्रबोधिनी एकादशी को ठाकुरजी ने वैवाहिक वेश में भक्तों को दर्शन दिये। मन्दिर के लीला मंच पर सायंकाल के समय श्री तुलसी-शालिग्राम विवाह का आयोजन हुआ। मन्दिर प्रबन्धन ने वर पक्ष व भक्तों ने कन्या पक्ष का दायित्व सहर्ष स्वीकार करके बड़ी संख्या में भाग लिया। रात्रि के समय भक्तों ने श्रीतुलसी महारानी का कन्यादान करते हुए प्रचुर मात्रा में धातु पात्र, वस्त्र, आभूषण, द्रव्य व अन्यान्य सामिग्री प्रदान की। परम्परागत गन्ना

मंच पर श्रीगोपाल जी को विराजमान करके विधि-विधानपूर्वक 'महाराजश्री' के आनुगत्य में देव प्रबोधिनी कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम के अन्त में प्रसिद्ध 'हरि लूट' में भक्तों ने नव गन्ना लूटकर अपने को कृतार्थ किया। जो माँ, बहन, वृद्ध आदि हरि-लूट में भाग नहीं ले सके उन्हें अन्य भक्तों ने गन्ना प्रसाद वितरित किया।

कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा को प्रात:काल मंगला आरती के बाद पट बन्द कर दिये जाते हैं। कार्तिक नियम सेवा के अन्तर्गत ब्रजवासी प्रात:काल उठकर यमुना स्नान करते हैं, उसके उपरान्त श्री राधादामोदर, राधा श्यामसुन्दर, राधावल्लभ लाल, राधारमण जी आदि की मंगला आरती के दर्शन करते हैं। स्त्रियाँ यमुना स्नान हेतु जाते समय भजन गायन करती हैं तथा उत्साह के साथ धर्म कार्यों में व्यस्त होती हैं। राधाश्याम सुन्दर मन्दिर में विभिन्न रूपों में ठाकुर विग्रह के दर्शन होते हैं। इसके उपरान्त मन्दिर के जगमोहन में विराजमान होकर लाला-लाली, श्रीराधा कुञ्ज बिहारी जी छप्पनभोग के मध्य दर्शनार्थियों को दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं । असंख्य भक्त ठाकुर जी के विद्युत चलित महारास दर्शन से अभिभूत होते हैं। यह क्रम रात्रि तक चलता रहता है । श्रीमन्महाप्रभु जी की शोभायात्रा की आरती के साथ मंदिर के पट बन्द किये जाते हैं और श्रृंगार लीला महोत्सव का समापन हो जाता है।

ब्रज के मंदिर-देवालयों में कार्तिक माहात्म्य प्राचीन परम्परा शास्त्र एवं लोक दोनों रूपों में प्रदर्शित है। कार्तिक परम्परा को लेकर जहाँ विभिन्न वैष्णव सम्प्रदायों में स्व विधान अलग-अलग कालक्रमों में रचित हुए वहीं सोहनी सेवा वन एवं ग्राम परिक्रमा भी इस मनोरथ का अंग रहे हैं। इसी के साथ यमुना-तट एवं प्रभु की लीला स्थली के रूप में संज्ञित स्थलों पर माह पर्यन्त एकान्तवास भी इस परम्परा के महत्वपूर्ण अंग हैं।

## बिहार पंचमी

अब ऋतु परिवर्तित होकर शीतकाल दुन्दुभि बजाकर प्रवेश कर रहे हैं। अत: मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमी को वृन्दावन में विहार पंचमी का उत्सव होता है। यह बाँके बिहारी जी का प्राकट्य दिवस है। हरिदासी सम्प्रदाय के मन्दिरों और देवालयों में यह उत्सव बहुत धूमधाम से मनाया जाता है।

वृन्दावन के समस्त अवतारों में सर्वाधिक दयालु अवतार श्रीबाँके बिहारी जी का माना जाता है। भक्त अपने ईश्वर को जिस भाव में भजते हैं, वह उसे उसी स्वरूप में कृतार्थ कर देते हैं। ईश्वर अपने सच्चे भक्त को कभी निराश नहीं करते हैं। श्रीबाँके बिहारी को पृथ्वी पर सगुण साकार रूप में लाने का श्रेय हरिदास जी को है। निधिवन में स्वामी हरिदास जी सखि भाव में प्रिया-प्रियतम की उपासना करते थे। विक्रम सम्वत् 1552 की मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमी के दिन जब श्रीराधा-कृष्ण की रासस्थली निधिवन में स्वामी हरिदासजी ने तानपूरे को हाथ में लेकर तान छेड़ी तो वहाँ पर नीले-गौर प्रकाश की कोमल किरणें फैलने लगीं, धीरे-धीरे प्रकाश पुंज बढ़ने लगा तब उसके मध्य परस्पर हाथ थामें मुस्कराते हुये श्रीश्यामा-कुंज बिहारी के दर्शन हुये।

स्वामी हरिदास जी की संगीत साधना से प्रसन्न होकर प्रकट हुये ठा. बांकेबिहारी महाराज का प्राकट्योत्सव श्रद्धा और धूमधाम से मनाया जाता है। प्राकट्य स्थली पर भोर से ही बधाई गायन व महाभिषेक शुरू हो जाता है। ठा॰ बांकेबिहारी विक्रम संवत 1563 की मार्गशीर्ष मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को प्रकट हुये थे। इसे विहार पंचमी भी कहते हैं।

प्राकट्योत्सव पर ठा॰ बांकेबिहारी जी की प्राकट्यस्थली निधिवनराज मंदिर में सेवायत के आचार्यत्व में सुबह पाँच बजे दुग्ध, दही, घृत, शहद, यमुना जल, गुलाब जल, जड़ी-बूटियों से वेदमंत्रों के अनुगूँज के मध्य ठाकुरजी का महाभिषेक होता है और बधाई गायी जाती है।

इस अवसर पर ठा॰ बाँकेबिहारी मंदिर को भव्य तरीके से सजाया जाता है। मंदिर प्रांगण और बाहर चबूतरे पर पीत रंग के वस्त्र और गुब्बारे की आकर्षक सजावट होती है। रात में रंग-बिरंगी लाइटों से मंदिर जगमगाता हुआ नजर आता है। इस दिन बाँकेबिहारी जी महाराज को पीत रंग के वस्त्र धारण कराते हैं व ठाकुरजी मोर मुकुट, कटि-काछनी पहन स्वर्ण आभूषण धारण कर भक्तों को दर्शन देते हैं। वैसे तो ठाकुरजी को अनेक सामग्रियों का भोग लगता है, किन्तु आज के दिन भगवान को पंच मेवा युक्त हलुआ का विशेष भोग अर्पण किया जाता है। आज के दिन ठाकुरजी का भोग स्वामी हरिदास जी के साथ लगाया जाता है।

इस दिन प्रात:काल आठ बजे से निधिवनराज मन्दिर से बधाई यात्रा बैण्ड-

बाजों के साथ निकलती है। दोपहर की आरती से पूर्व दर्जनों बैंड और हजारों भक्तों के जयकारों के बीच मारवाड़ी परिवार की महिलायें पीत वस्त्र धारण कर डांडिया नृत्य करती हुई स्वामी हरिदास जी के डोले के साथ बाँके बिहारी मंदिर पहुंचती हैं। वहाँ ठाकुर जी को भोग लगाया जाता है तथा भोग में पंच मेवा व हलुवा एवं अन्य विभिन्न खाने के पदार्थों को ठाकुरजी के समक्ष परोसा जाता है तथा इसके पश्चात ठाकुरजी की राजभोग आरती होती है और भक्तगणों को पंचमेवा युक्त हलुवा का प्रसाद बाँटा जाता है।

प्राकट्योत्सव के दिन वृन्दावन नगर के घर-घर में हलवा-पूड़ी बनती है तथा भक्त अपने-अपने घरों में हलवा बनाकर बांके बिहारी जी का भोग लगवाने के लिये लाते हैं। सेवायत जी ने बताया कि शाम को संगीत के माध्यम से अनेक संगीतज्ञ मंदिर में स्वामी जी को अपनी भावांजलि और बिहारीजी के प्राकट्य की खुशी में बधाई गायन करते हैं।

## व्यंजन द्वादशी

शीतकाल में ठाकुरजी को शीत से बचाने के लिये गरम वस्त्र व मोजे आदि धारण कराये जाते हैं। परम्परागत ताप सेवा के लिये कच्चे कोयले की सिगड़ी ठाकुरजी के सम्मुख रखी जाती है। जिससे ठाकुरजी को गर्मी मिल सके।

मार्गशीर्ष शुक्ला 12 को ब्रज के मन्दिरों में व्यंजन द्वादशी का उत्सव मनाया जाता है। इस दिन मंदिरों में अनेकों को प्रकार के व्यंजनों का ठाकुरजी भोग लगाते हैं। व्यंजन द्वादशी का महोत्सव छोटे अन्नकूट के रूप में मनाया जाता है जिसमें तरह-तरह के व्यंजन ठाकुरजी के सम्मुख परोसे जाते हैं तथा तुलसी दल पधरा कर भोग लगाया जाता है।

महाभारत में उल्लेख है कि इस शुभ दिन पर माँ यशोदा ने अनेक प्रकार के स्वादिष्ट पकवान बनाकर प्रिय पुत्र श्रीकृष्ण को प्रेम से खिलाये थे। कलियुग में एक बार फिर इसी दिन शची माता ने बालक श्री चैतन्य महाप्रभु को इसी तरह पकवान खिलाये थे।

इस दिन निम्बार्क सम्प्रदाय के मंदिरों में नारद जयंती के उत्सव का आयोजन

अत्यधिक उत्साह के साथ किया जाता है। नारदजी को पंचामृत एवं गुलाब जल, जड़ी-बूटी मिश्रित जल से अभिषेक कराया जाता है तथा विशेष आरती का आयोजन किया जाता है। जरी का श्रृंगार तथा पीले रंग की पोशाक धारण कराते हैं व अनेक प्रकार की मिठाई व पकवानों का भोग अर्पण किया जाता है। नारदजी निम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य माने जाते हैं। इसलिये यह उत्सव अत्यधिक हर्षोल्लास से मनाया जाता है। कुछ मन्दिरों में आज के दिन से खिचड़ी उत्सव भी प्रारम्भ हो जाता है।

ठाकुरजी की सेवा प्रणाली के अनुसार ऋतु परिवर्तन होते ही ठाकुरजी को नवान्न निवेदन के अन्तर्गत विभिन्न भोग-व्यंजन निवेदित किए जाते हैं। इस ऋतु में नव अन्न आ जाने के कारण ठाकुरजी को नवान्न का भोग लगाया जाता है।

आज से ही गौड़ीय सम्प्रदाय के मंदिरों में खिचड़ी उत्सव प्रारम्भ हो जाता है। जो कि एक माह पर्यन्त अर्थात् पौष शुक्ल 12 तक चलता है। इसमें ठाकुरजी को प्रतिदिन उष्ण खिचड़ी निवेदित की जाती है। उसमें घी, दधि, चटनी, पकौड़े, मेवादि का प्रचुर समावेश रहता है। ठाकुरजी को शीत प्रहारों से बचाने के लिये यह खिचड़ी उत्सव एक माह तक चलता है। इसके पश्चात भी शीत का प्रकोप जारी रहने पर यह सेवा आगे भी चलती रहती है। उसी दिन से ठाकुरजी को ऊनी वस्त्रों के साथ कर एवं पाद में मोजे भी धारण कराये जाते हैं एवं ताप सेवा के लिये कच्चे कोयले की सिगड़ी भी उनके निकट स्थापित की जाती है। जिससे उनके सुकोमल श्रीअंग को शीत प्रभावित न कर सके। यह ठाकुरजी को लाड़ लड़ाने की गौड़ीय परम्परा का एक अंग है। ठाकुरजी को रात्रि शयन देते समय नर्म रूई की रजाई भी अवेष्टित की जाती है। जिससे ठाकुरजी सुख निद्रा ले सकें।

## खिचड़ी उत्सव

पौष मास खरमास है। इसमें व्रतोत्सव व त्योहार नहीं होते हैं। इस महीने में सभी मंदिरों में अपनी-अपनी मान्यतानुसार खिचड़ी उत्सव होता है। वृन्दावन में श्रीराधावल्लभलाल का खिचड़ी उत्सव अत्यन्त प्रसिद्ध है। यह अर्द्ध पौष से अर्द्ध माघ तक चलता है। प्रातःकाल ठाकुरजी को घी-मेवा के साथ सिद्ध की गयी

गरमा-गरम खिचड़ी का भोग लगाया जाता है जो राधावल्लभी खिचड़ी के नाम से प्रसिद्ध है। यह दूर-दूर तक भेजी व मँगायी जाती है। जैसे श्री बांके बिहारी जी के दूध-भात की महिमा है, वैसे ही राधावल्लभ जी की खिचड़ी प्रसिद्ध है । उनकी विविध झाँकियों के दर्शन भी भक्तों को कराये जाते हैं। कभी शिव वेश के, कभी बांकेबिहारी के, कभी बलदाऊ जी के तो कभी राधाकृष्ण के युगल श्रृंगार स्वरूप के दर्शन होते हैं। इस उत्सव में समाज गायन भी होता है।

लाड़ले-दुलारे ठाकुर को ब्रज में कौन प्रेम नहीं करता। ब्रज के श्रीधाम वृन्दावन में ठाकुर राधावल्लभ जी को खिचड़ी खिलाकर भक्त और सेवायत निहाल हो उठे तो श्रीजी की सखियाँ भी प्रसन्न हो गईं। साढ़े तीन सौ साल पुरानी परंपरा का निर्वाह करते हुये ठाकुर राधावल्लभलाल को खिचड़ी का भोग लगाया जाता है। इस अवसर पर राधावल्लभ मंदिर में उत्सव का माहौल बन जाता है। ब्रज के अनूठे ठाकुर और अनूठे खिचड़ी उत्सव की धूम सब जगह होने लगती है। मंदिर में ब्रजवासियों और देश के कोने-कोने से आये भक्तों का जमावड़ा सुबह सात बजे बड़े से मंदिर प्रांगण में लग जाता है। इस दौरान समाज गायन और संगीतमय कार्यक्रम कर प्रभु राधावल्लभलाल को प्रसन्न किया जाता है।

पौष मास के शुक्ल पक्ष में यहाँ तीस दिनों तक चलने वाला खिचड़ी महोत्सव का आयोजन किया जाता है। इस उत्सव का शुभारम्भ हुआ तो हजारों की भीड़ मंदिर प्रांगण में जुट गई। इस उत्सव की विशेषता यह है कि भोग के पहले दिन ठाकुरजी को तेरह बार पोशाक पहनायी जाती है। इसके बाद तीस दिनों तक प्रतिदिन दस बार तरह-तरह की पोशाक पहनाकर उनका श्रृंगार किया जाता है। चूँकि ठाकुरजी श्रीधाम में बालस्वरूप में पूजे जाते हैं। इसलिये ब्रजवासियों का मानना है कि बालक की पोशाक बार-बार खाने-पीने से खराब हो जाती है। इसलिये तरह-तरह की पोशाक पहनाकर श्रृंगार किया जाता है। खिचड़ी महोत्सव पर ठाकुरजी ने फरगुन पोशाक धारण की जिसमें परंपरागत रूप से टोपा में जड़ी शाल को ओढ़ भक्तों को दर्शन दिये। शीत ऋतु में साधक अपने आराध्य राधावल्लभलाल को पंचमेवा युक्त खिचड़ी प्रसाद परोसकर इन पंक्तियों का गायन करते हैं तो भक्तों में आनंद छा जाता है।

*खिचरी स्वाद अरूसि रही रसना, दृग अरूझे प्रिय रूप गौर तन।*

*दुहुं विधि आतु रसिक-पुरंदर, सजनी समुझि निरखि प्रमुदित मन॥*

*गन सुनत श्रवननि नव-नव रूचि परस होत रोमांचित अंगन।*

*वृन्दावन हित रूप जाऊ बलि, अस कछु रस बस निपट धनी-धानी॥*

भोर होते ही मंगला आरती के दौरान औलाई वेश में दर्शन देते ठाकुरजी को देख खुद ही ठंड का अहसास होने लगता है तो ठाकुरजी को गर्म खिचड़ी, उसमें तैरता घी और पंचमेवा का प्रसाद गर्माहट देने के लिये परोसा जाता है। ठाकुरजी को परोसे जाने वाली खिचड़ी में दाल-चावल के अनुपात का घी, काजू, बादाम, जायफल, जावित्री, केसर, चिरौंजी समेत पंचमेवा और खीरसा की कुलिया, श्रीखंड, अचार, ग्वार की फरी, मुरब्बा, सेम का अचार, आलू की सब्जी, राई, आलू भी शामिल किये जाते हैं। इसमें हींग, लाल मिर्च का प्रयोग नहीं किया जाता है।

हेमन्त ऋतु में खिचड़ी उत्सव के आयोजन की परम्परा राधावल्लभीय संप्रदाय में काफी प्राचीन है। 18वीं शताब्दी में संत भक्तों द्वारा रचित साहित्य से यहाँ के प्राचीन संदर्भ उद्घाटित होते देखे जाते हैं। खिचड़ी महोत्सव ठाकुरजी का प्राचीनतम व प्रिय उत्सव है।

## मकर संक्रान्ति

इस मास में भी बहुत सर्दी पड़ती है। पिछले दो माह से अत्यधिक ठंड के कारण समस्त प्राणीगण त्राहि-त्राहि कर उठते हैं और इस ठंड से छुटकारा पाना चाहते हैं। सूर्य का रुख इस समय भी दक्षिण में होता है। पेड़-पौधे अपने पत्ते गिराने लगते हैं। इसी समय मकर संक्रान्ति का त्योहार आता है। संस्कृत भाषा में संक्रान्ति अथवा संक्रमण का अर्थ है- एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना। अत: जब सूर्य घूमते-घूमते मकर राशि में प्रवेश करता है तब मकर संक्रान्ति का त्योहार मनाया जाता है।

यह प्रत्येक वर्ष 14 जनवरी को आता है। इस पर्व का कोई नियत समय नहीं है किन्तु प्रतिवर्ष यह त्यौहार चौदह जनवरी या तेरह या कभी-कभी पन्द्रह जनवरी

को भी मनाया जाता है। जब सूर्य मकर राशि में प्रवेश करता है तब यह त्योहार मनाया जाता है।

इस दिन से सूर्य की किरणें सीधी होकर भारत की भूमि पर पड़ने लगती हैं। जिससे दिन बढ़ने लगते हैं व रातें छोटी होने लगती हैं। सर्दी की ऋतु का तिल-तिल करके ह्रास होने लगता है। खेत में खड़ी फसलों में फिर से जान आ जाती है और गेहूँ, जौ, चना व सरसों की बालियों में दाने पड़ने लगते हैं। सर्वत्र चहल-पहल होने लगती है।

इस दिन सूर्य की पूजा होती है। प्रमुख नदियों, सरोवरों आदि में स्नान होता है। लोग तिल से बने सामानों, खिचड़ी, फल, कपड़े, द्रव्य आदि पंडितों व गरीबों को दान में देते हैं। घर में बहुएँ, सास, ननद, जिठानी को सामान देती हैं। स्नान के लिये प्रमुख नदियों के किनारे जाती हैं। इस दिन नवान्न पकाया जाता है। अत: इस पर्व को पकवान पर्व भी कहते हैं। मकर संक्रान्ति के दिन पकवान तैयार करके सूर्य भगवान को चढ़ाया जाता है। इस दिन सूर्य की पूजा के साथ वायु तथा जल देवता की भी पूजा होती है।

मकर राशि पर सूर्य पर आगमन की तिथि मकर संक्रान्ति कहलाती है। इस दिन से सूर्य उत्तरायण हो जाते हैं। अत: इस तिथि का विशेष धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व माना जाता है। उत्तरायण को देवयान भी कहते हैं। इस छ: माही में शरीर छोड़ने वाले ब्रह्मवेता मनीषी ब्रह्म में लीन हो जाते हैं।

यह पावन तिथि पौष के अन्त में अथवा माह के प्रारम्भ में आती है और ईसवी सन् की प्राय: 14 जनवरी को होती है। इस दिन ब्रज के मंदिरों में बड़ा उत्सव होता है। ब्रज के मंदिरों में इस दिन प्राय: खिचड़ी की झाँकियाँ होती हैं और वल्लभ संप्रदाय में भोग के पदों का गायन व उत्सव होते हैं। जन साधारण इस दिन तिल के लड्डू और खिचड़ी के दान के साथ देव-पूजन-स्नानादि-धार्मिक कृत्य करते हैं।

इस पावन पर्व पर ठाकुरजी को पंचमेवा तथा खिचड़ी, तिल के लड्डू, बाजरे की टिकिया एवं अनेक प्रकार की सामग्रियों का भोग लगाया जाता है। शीतकाल के कारण भगवान को ऊनी वस्त्र धारण कराते हैं तथा चाँदी की सिगड़ी ठाकुरजी को गर्मी प्रदान करने के लिये जलाते हैं।

## सकट चौथ

माघ मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को संकट हरण गणेश जी का जन्मदिवस माना जाता है। इसलिये इस तिथि को संकट चौथ व सकट चौथ संकष्टहर अथवा संकटा चौथ कहते हैं। इस दिन गणपति की पूजा होती है। यह व्रत संकटों को नष्ट करने वाला और सभी अभिलाषाओं की पूर्ति करने वाला है। माघ मास की कृष्ण चतुर्थी के दिन प्रात:काल स्नानादि से निवृत्त होकर कलश की स्थापना करके गणेश जी की प्रतिमा स्थापित करते हैं व गणेश जी को सिन्दूर चढ़ाकर स्तोत्र पाठ करते हैं। लड्डू का भोग एवं तिलकुट बनाकर उसे गणेश जी को अर्पित किया जाता है। इस दिन गणेश जी के साथ चन्द्रमा और रोहिणी की भी पूजा की जाती है।

ब्रज के गणेश मंदिरों में यह उत्सव अत्यधिक धूमधाम से मनाया जाता है। इस दिन गणेशजी का महाभिषेक किया जाता है। उसके पश्चात गणेश जी को चोला चढ़ाया जाता है तथा तिल के लड्डू का भोग लगाया जाता है। इस अवसर पर महाआरती का आयोजन किया जाता है। इसलिये हजारों की संख्या में श्रद्धालु एकत्रित होकर दर्शन प्राप्त करते हैं। इसके पश्चात प्रसाद वितरित किया जाता है। इस अवसर पर मथुरा के गणेश मंदिर पर बड़े मेले का आयोजन किया जाता है।

इस त्योहार से संबंधित एक कथा है कि प्राचीनकाल में मानव नाम का एक धर्मात्मा राजा था। उसकी सुन्दर तथा गुणवती पत्नी का नाम रत्नावली था। दुर्भाग्य से राजा के शत्रुओं ने उस पर आक्रमण किया और राजा को अपना राज्य छोड़कर जंगल में शरण लेनी पड़ी। वहाँ पर राजा को महामुनि मार्कण्डेय के दर्शन हुये। उन्होंने राजा को बताया कि वे पूर्वजन्म में व्याध थे। व्याध रूप में किये गये पापों के कारण यह फल भोगना पड़ रहा है। मुनि मार्कण्डेय जी के कथनानुसार राजा ने गणेश चतुर्थी का व्रत करके सुख-समृद्धि प्राप्त की तथा शत्रुओं पर विजय पाई।

## मौनी अमावस्या

माघ पक्ष 15 को मौनी मावस का लोकोत्सव होता है। इस दिन ब्रज के नर-नारी यमुना स्नान और दान-पुण्य करते हैं। इस दिन मौन रहकर स्नान करने का

बहुत महत्व होता है। स्नान सूर्योदय के समय ही श्रेष्ठ माना गया है। यह स्नान वेग से बहने वाली किसी भी नदी के जल से अथवा रात भर छत पर रखे हुये जलपूर्ण घट से करना चाहिये।

*दुःखदारिद्र्यनाशाय श्री विष्णोस्तोषणाय च।*
*प्रातः स्नानं करोम्यघ माघे पापविनाशनम्।।*

सूर्य को अर्घ्य देकर हरि का पूजन या स्मरण करना चाहिये। माघ स्नान के लिये चारों आश्रमों तथा चारों वर्णों के लोग अधिकारी माने जाते हैं। इस दिन मौन रहकर भगवान का ध्यान-भजन करना चाहिये। ब्राह्मणों को भोजन कराकर कम्बल, मृगचर्म, कपड़े, जूते आदि दान करना चाहिये।

इन्हीं दिनों में त्रिवेणी-संगम पर प्रसिद्ध मेला लगता है। मेले में धार्मिक चर्चाएँ होती हैं। कथा-सत्संग होता है, कीर्तन होता है। इस अवसर पर यहाँ लाखों लाख व्यक्ति जमा होते हैं।

अत्यधिक ठंड होने के कारण ठाकुर जी को गर्मी प्रदान करने के लिये ऊनी वस्त्र धराते हैं तथा ठाकुरजी के समक्ष सिगड़ी रखते हैं। पंच मेवा के साथ सुहाग-सोंठ आदि विशेष प्रकार के व्यंजनों का भोग लगाया जाता है। इस अवसर पर भगवान की विशेष आरती होती है, जिसमें अनेक भक्त शामिल होते हैं। सभी सम्प्रदायों में अपनी-अपनी मान्यता के अनुसार उत्सव का आयोजन किया जाता है।

इस अमावस्या को मौन रहकर व्रत-नियम-पूजन, मुनियों की तरह आचरण एवं स्नान-दान का विशेष महत्व होता है। मौनी अमावस को सोमवार हो तो महत्व और बढ़ जाता है। माघ मास में गंगा-यमुना-सरस्वती त्रिवेणी स्नान की बड़ी महिमा है। यहाँ कल्पवास होता है। इस दिन तिल, तेल, आंवला दान का विशेष महत्व है। इस अवसर पर यज्ञ, दान, ब्राह्मण भोजन, दरिद्र नारायण को भोजन कराना चाहिये। मिष्ठान्न, कम्बल दान करना चाहिये।

## बसन्त पंचमी (होलिकोत्सव का प्रारंभ)

माघ मास आते-आते सर्दी का प्रकोप काफी कम हो जाता है। वन-उपवन में बहार आ जाती है। पेड़ों में नये-नये पत्ते आने लगते हैं। पलाश-सेमल के

लाल-नारंगी फूल वातावरण में रंग बिखेर देते हैं और पक्षियों का कलरव सुनाई पड़ने लगता है। आम में बौर आ जाती है। कोयल की कूक सुनाई पड़ने लगती है। बाग-बगीचों में तरह-तरह के फूल महकने लगते हैं। रंग-बिरंगी तितलियाँ, भँवरे और मधुमक्खियाँ एक फूल से दूसरे फूल पर मँडराने लगती हैं। यह सब प्रकृति का सोकर जागने का समय है। इस तरह सर्वत्र रंगीनी और मादकता बिखेरता हुआ आता है ऋतुराज बसंत।

माघ शुक्ल पंचमी के दिन शीत ऋतु को भावभीनी विदाई देकर धरती पर बसन्त उतरता है। आज का दिन ऋतु पूजा, रति पूजा, वेद पूजा, सरस्वती पूजा, प्रकृति पूजा, देव पूजा, बसंत पूजा और कृष्ण पूजा का दिन होता है। ऋतुराज बसन्त के स्वागत में प्रकृति यौवनमयी हो उठती है। डाल-पात में, कूल-कछारों में, वनों में, बागों में बसन्त बिखर जाता है। आमों में बौर लग जाती हैं। खेतों में सरसों फूल जाती है और धरती पहन लेती है पीली चूनर। कोयल की कूक संगीत की सृष्टि करती है। बसन्त एक उत्सव ही बनकर धरती पर आता है।

माघ शुक्ल पंचमी को यह उत्सव पूरे ब्रज मण्डल में बड़े धूमधाम से मनाया जाता है। इस दिन हर मंदिर में आम्र पुष्प अर्पित किये जाते हैं। इन पुष्पों को ठाकुरजी के मुकुट में लगाया जाता है। इसके साथ ही गेंदें के पुष्पों से भी ठाकुरजी को सजाया जाता है। इतना ही नहीं इस दिन मन्दिरों को बसन्ती पीले परदों से सजाया जाता है। बसन्त पंचमी का उत्सव प्राचीनकाल से चला आ रहा उत्सव है। ब्रज में बसन्त खेल शुरू होता है जो कि चालीस दिन तक चलता है। जैसे- ठाकुर जी को देव प्रबोधिनी से साटन के वस्त्र धराने शुरू हो जाते हैं। शीतकाल के कारण उसके आगे छीर के वस्त्र धराये जाते हैं और जब शीत कम हो जाता है तो बसन्त के पहले फिर से जरी के वस्त्र धराये जाते हैं और बसन्त के बाद सादे सफेद वस्त्र ठाकुरजी को धराना शुरू किया जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि ठाकुरजी को रंग से खिलाना है और सफेद रंग पर सब रंग खिल जाते हैं।

बसन्त पंचमी का दूसरा नाम श्री पंचमी भी है। इस दिन पीले रंग की बहार आ जाती है। ब्रज क्षेत्र के प्रत्येक मंदिर में ठाकुर जी पीले वस्त्रों तथा फूलों से सजा दिये जाते हैं। जिसमें कृष्ण और राधा को फूलों से ढक दिया जाता है। लोग इस दिन पीले वस्त्र पहनते हैं। घरों में या तो कामदेव की पूजा करते हैं या फिर सरस्वती देवी

की। पीला मीठा या नमकीन चावल, हलवा केसर का, आम के बौर, सरसों व गेंदे के पीले फूल, धूप-दीप नैवेद्य से विधिवत पूजा की जाती है और प्रसाद बांटा जाता है। मथुरा में दुर्वासा ऋषि के मंदिर बहुत बड़ा मेला लगता है। आज के दिन से होली की तैयारी शुरू हो जाती है। फाग, होली, रसिया, स्वांग आदि गाये जाने लगते हैं तथा भगवान को गुलाल भी लगाया जाता है। माघ शुक्ल पंचमी से बसन्त आरम्भ होता है। इस दिन मंदिरों में श्रीकृष्ण तथा सरस्वती जी की पूजा की भारी तैयारी होती है। प्रात:काल स्नानादि से निवृत्त होकर पूजा प्रारम्भ की जाती है। मंडप बन्दनवारों से सजाया जाता है। फल, फूल, पत्र, पुष्प चढ़ाये जाते हैं। पीताम्बर की प्रतिष्ठा होती है। मण्डप में मूर्ति के समक्ष पूजा, अर्चना, नृत्य, गीत आदि होते है। प्रसाद वितरण होता है। बसन्त का यह उत्सव परम सुख और धन-धान्य देने वाला होता है। सरस्वती की आराधना करने वाला व्यक्ति आयु-आरोग्य, रूप, ऐश्वर्य, विद्या, बुद्धि और सिद्धि संपदा को पाने वाला होता है।

माघ शुक्ल पंचमी यानी बसंत से ब्रज का होरा यानि चालीस दिवसीय फाग महोत्सव प्रारम्भ हो जाता है। पहले दिन ही मंदिरों में कन्हैया भक्तों पर अबीर-गुलाल उड़ाते हैं। होली का आरम्भ हो जाता है। शहर व देहात में चौराहों पर डांढ़ा लगाया जाता है। रंगों की विविधता की तरह ब्रजवासी भी विविध प्रकार से चालीस दिन तक होली महोत्सव मनाते हैं। शेष ठाकुर जी को अबीर-गुलाल अर्पित किया जाता है।

वृन्दावन में बसन्त पंचमी के अवसर पर शाह बिहारी मंदिर में बसंती कमरा खुलता है साल में केवल दो बार ही इसके दर्शन होते हैं। बसंती कमरे की आलौकिक छटा दिखायी देती है। ठाकुर राधारमणलाल जू महाराज रंग-बिरंगी रोशनी से नहाये बसंती कमरे में विराजमान होकर भक्तों को दर्शन देते हैं।

बसंत पंचमी पर ठाकुर बांकेबिहारी मंदिर में गुलाल उड़ता है। इस अलौकिक दृश्य के साक्षी बनने को देश के कोने-कोने से बड़ी संख्या में श्रद्धालु आते हैं। बसन्त पंचमी पर ब्रज में होली का डांढ़ा गड़ने से राधावल्लभ मंदिर, राधादामोदर, सेवाकुंज मंदिर, यशोदानंदन मंदिर आदि में फागुन उत्सव शुरू हो जाता है। मथुरा में श्रीकृष्ण जन्मस्थान पर केशवदेव मंदिर में बसंती कमरा सजाया जाता है। ठाकुरजी को बसंती पुष्प और बसंती वस्त्र, श्रृंगार से सजाया जाता है।

मंदिर प्रांगण को बसंती प्रकाश से सजाया जाता है।

पुष्टिमार्गीय संप्रदाय के मंदिर द्वारिकाधीश में राजभोग दर्शन के समय होली के रसिया का गायन होता है। मंदिर के मुखिया द्वारिकाधीश को अबीर, गुलाल और चंदन से होली खिलाते हैं और यह परंपरा चालीस दिन तक चलती है। बरसाना के लाडिली मंदिर और नंदगाँव के नंदबाबा मंदिर में समाज गायन प्रारम्भ हो जाता है।

ऋतुराज बसंत के आगमन पर तलहटी के मंदिर में पीली छटा दिखायी देती है। मंदिरों को पीले पुष्पों से सजाया जाता है। दान घाटी में भक्त सेवाधिकारी गुलाल व फूलों की होली खिलाते हैं। इसके अलावा मानसी गंगा, मुकुट मुखारविन्द, नया मंदिर हरिदेव जी महाराज जतीपुरा व जतीपुरा मुखारविंद मंदिर आदि में बसंत पंचमी अत्यधिक धूमधाम से मनायी जाती है। इसी तरह ब्रज के अन्य स्थानों पर भी बसन्त पंचमी का उत्सव मनाया जाता है।

बसंत पंचमी के अवसर पर ठाकुर जी को केसरिया भात, खीर और पकवान, बेर व अन्य सामग्रियों का भोग अर्पित किया जाता है। बसंत ऋतु के अवतरण के उपलक्ष्य में प्राचीनकाल से एक उत्सव मनाया जाता है, जिसे सुवन्तक कहते थे। वर्तमानकालीन बसंत पंचमी का उत्सव उसका प्रतिनिधि कहा जा सकता है। इस ऋतु के प्राचीन उत्सवों में सुवन्तक के अतिरिक्त बसन्तोत्सव, मदनोत्सव, अशोकोत्तसिका आदि के नामोल्लेख मिलते हैं। आजकल इनका प्रतिनिधि होलिकोत्सव है। जो फाल्गुन के पूरे महीने भर तक बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है।

बसंत पंचमी सरस्वती देवी का जन्म दिवस भी है। अत: इस दिन माँ सरस्वती की पूजा होती है। यह ब्रज का एक प्रसिद्ध लोकोत्सव है। ब्रज की नारियाँ और बालक-बालिकायें उस अवसर पर पीले वस्त्र पहनते हैं।

सरस्वती-पूजन के अलावा बसंत पंचमी के दिन भगवान श्रीकृष्ण की सांगोपांग पूजा होती है। श्रीकृष्ण की मूर्ति के समक्ष गोपियों का नृत्य होता है। मूर्ति को रोली लगायी जाती है। ताम्बूल चढ़ाया जाता है और भाँति-भाँति का प्रसाद भोग लगाया जाता है। पूजा के अंत में भगवान की आरती उतारी जाती है फिर प्रसाद बांटा जाता है।

ठाकुर श्री बांके बिहारी जी महाराज की होरी ब्रज में ही नहीं, बल्कि सारे विश्व में स्थान रखती है। क्योंकि लिखा गया है कि 'जग होरी ब्रज होरा, कैसा ये देश निगोड़ा' मतलब सारे भारतवर्ष में तो होती है होरी, लेकिन ब्रज में होता है होरा, होरा मतलब होरी का बड़ा रूप।

बिहारीजी की होली वैसे तो बसंत पंचमी से ही शुरू हो जाती है। सवा महीने पहले से ही होली का खूंटा गढ़ जाता है, ब्रजमंडल में होली की शुरुआत हो जाती है बसंत से ही।

बसंत पंचमी के दिन बिहारीजी मंदिर में तीनों आरतियों के साथ ही अंदर अबीर-गुलाल भक्तों और दर्शनार्थियों के ऊपर प्रसादस्वरूप उड़ाया जाता है तथा बसंत पंचमी से ही बिहारी जी की होली शुरू हो जाती है।

लेकिन भक्तों तथा दर्शनाथियों के साथ होली बिहारीजी फागुन की शुक्ल पंचमी की एकादशी से खेलते हैं। इसको रंगभरनी एकादशी कहते हैं। एकादशी की सायं से लेकर धुलैंड़ी की शाम तक बिहारी जी बाहर जगमोहन में दर्शन देते हैं तथा वहीं से अपने भक्तों के साथ होली खेलते हैं ठाकुरजी का होली में विशेष दर्शन तथा श्रृंगार होता है। ठाकुर जी का विशेष भोग भी लगता है।

बिहारीजी के भोग में केसर और मेवा का प्रयोग बढ़ जाता है। चंदन, जिसमें बिहारीजी की गोपियों के साथ होली खेलने में बल का प्रयोग करने में सहूलियत रहती है। ठाकुरजी होली में गुलाल जब अंदर चला जाता है तो उसे निकालने के लिए जलेबी का भोग लगाया जाता है उसके रस से गुलाल निकल जाता है।

जगमोहन में जो गीला रंग बरसता है वह प्राकृतिक होता है जिसे लेने के लिए भक्त ही नहीं देवता भी तरसते हैं। टेसू के फूलों को गरम करके निकाला जाता है, जो एक औषधि का काम करती है।

समूचा वृन्दावन, ब्रजमण्डल, भारतवर्ष, विश्व के लोग ही नहीं बल्कि देवता भी किसी न किसी रूप में इन दर्शनों का तथा बिहारीजी के साथ होली खेलने के लिए लालायित रहते हैं।

श्रीहित हरिवंश महाप्रभु द्वारा सेवित श्रीराधावल्लभलाल जी मंदिर में होली उत्सव का शुभारंभ बसंत पंचमी से ही आरंभ हो जाता है। इस दिन श्रीजी

(श्रीराधावल्लभलाल जी को इसी नाम से संबोधित करते हैं) को गुलाल अर्पित करने के उपरान्त दर्शनार्थी भक्तों पर प्रात:कालीन सेवा में गुलाल उड़ाया जाता है तथा समाज में बसंत के पदों का गायन प्रतिदिन होता है। बाकी सेवा पूर्ववत ही होती है। इसके उपरान्त फाल्गुन शुक्ला दौज को फुलैरा दौज के दिन श्रीजी कमर में फेंटा बांधकर सखियों के साथ होली खेलने के लिए कमर कस लेते हैं तथा समाज में धमार गायन विशेष रूप से होता है। इसने पश्चात फाल्गुन शुक्ला एकादशी (रंगभरनी एकादशी) को श्रीराधाकृष्ण स्वरूप ब्रजवासी बालक श्री वृन्दावन धाम में डोले पर विराजमान होकर बैंडबाजों के साथ ब्रजवासियों से होली खेलते हुए, गुलाल उड़ाते हुए नगर भ्रमण करके श्रीराधावल्लभ मंदिर वापस आते हैं। इसी के बाद वृन्दावन के सभी मंदिरों में रंगीली होली आरंभ होती है। जिसमें श्रीराधावल्लभलालजी कमर में गुलाल का फेंटा बाँधकर रजत-स्वर्ण की पिचकारी से केशर गुलाब जल टेसू के फूलों से निर्मित रंग से पूर्णिमा तक नित्य सखी स्वरूप भक्तों के साथ होली खेलते हैं। इन दिनों श्रीजी धवल वस्त्र धारण करते हैं, जलेबी तथा पूआ का विशेष भोग लगता है तथा चैत्र कृष्ण प्रतिपदा (धूलेंडी) के दिन श्रीजी गुलाब के कुंज में विराजमान होकर दर्शन देते हैं। इसे गुलाब डोल दर्शन कहते हैं। इस दिन भी जलेबी तथा पूआ का भोग लगता है तथा इसी के साथ होली के उत्सव का समापन हो जाता है।

## महाशिवरात्रि पर्व

मथुरा के भूतेश्वर, रंगेश्वर, गोकर्णेश्वर, गर्तेश्वर, पिप्लेश्वर, वृन्दावन के गोपेश्वर, गोवर्धन में चकलेश्वर, नन्दगाँव के नन्देश्वर आदि प्रमुख शिव मन्दिर हैं। फाल्गुन मास के मुख्य त्यौहार शिवरात्रि और होली हैं। फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी को महाशिवरात्रि व्रत किया जाता है। ब्रज में भी लोग दिनभर उपवास करते हैं तथा फलाहार करते हैं। शिवलिंग पर दूध चढ़ाते हैं और फल, फूल, धतूरा और बेलपत्र से पूजा करते हैं। कहीं-कहीं भांग भी चढ़ाई जाती है। नदियों में स्नान भी किया जाता है।

फाल्गुन के उत्सवों में शिव चौदस का व्रत और लोक-त्यौहार भी उल्लेखनीय हैं। यह लोकोत्सव फाल्गुन 14 को मनाया जाता है। उससे एक दिन

पहले तेरस की रात को शिवरात्रि का जागरण करते हुये विवाह के लोकगीत गाये जाते हैं। जोगी लोग अपनी सारंगी और डमरू पर महादेव-पार्वती के विवाह की लोक कथा का गायन करते हैं। दूसरे दिन नर-नारी व्रत रखते हैं और महादेव जी की पूजा करते हैं। उसी दिन नव विवाहित महादेव-पार्वती जी के मंदिर में जेहर चढ़ाती हैं। वे मिट्टी को कोरी गागरों में पानी भरकर गाती-बजाती हुई महादेव जी के मंदिर में जाती हैं। नव दम्पत्ति से महादेव-पार्वती का पूजन कर उन गागरों को शिवलिंग पर चढ़ा देते हैं। उसे गागर या जेहर चढ़ाना कहते हैं। जिस समय स्त्रियों की मंडली जेहर चढ़ाने जाती हैं। उस समय वे होली के रसिया की धुन का गायन करती हैं।

शिव मंदिरों में इस दिन रात्रि जागरण तथा रात के चार पहर की पूजा होती है। सवा लाख बत्तियों की विशेष आरती होती है। शंकर भगवान को इस अवसर पर दूल्हे की भाँति सजाया जाता है। मंदिर का प्रांगण भी विद्युत प्रकाश से झिलमिला उठता है। गेंदे के फूलों से मंदिर को सजाया जाता है। इस दिन भगवान को छप्पन भोग अर्पित किये जाते हैं। शंकर भगवान की प्रिय भाँग भी अर्पित की जाती है। हजारों की संख्या में श्रद्धालु दर्शन करने के लिये पधारते हैं। आक, धतूरा, बेलपत्र और सिन्दूर से शिवलिंग की पूजा की जाती है तथा जल चढ़ाया जाता है। रात्रि भर जागरण और भजन-कीर्तन होता है।

शिवरात्रि की तिथि के विषय में मान्यता है कि फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी के दिन शिवजी ने समुद्र-मंथन के पश्चात् गरलपान किया था तथा मूर्च्छित हो गये थे। इस कारण सृष्टि में चारों ओर हाहाकार मच गया था। संपूर्ण देवता तब खाना-पीना छोड़कर रात भर शिवजी की मंगलकामना करते रहे। तभी से यह व्रत प्रचलित हुआ।

*चतुर्दश्यां तु कृष्णायां फाल्गुने शिव पूजनम्।*
*तामुपोष्य प्रयत्नेन विष्यान् परिवर्जयेत्।।*

इस उत्सव को प्रतिवर्ष करने से यह 'नित्य' और किसी कामनापूर्वक करने से 'काम्य' होता है। जिस तिथि का जो स्वामी होता है। उसका उसी तिथि में अर्चन फलदायी होता है। भगवान शिव चतुर्दशी के स्वामी हैं। इसलिये यह चतुर्दशी को किया जाता है। चूंकि रात्रि में इस व्रत का विधान है इसलिये इस तिथि को शिवरात्रि कहते हैं। यद्यपि प्रत्येक महीने की कृष्ण चतुर्दशी शिवरात्रि होती है किन्तु ईशान

संहिता के अनुसार फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि में कोटि सूर्य के समान प्रभा वाले ज्योर्तिलिंग का प्रादुर्भाव हुआ था। इस कारण महाशिवरात्रि मानी जाती है।

*शिवरात्रिवृतं नाम सर्वपापप्रणाशनम्।*
*आचाण्डाल मनुष्याणां भुक्ति मुक्ति प्रदायकम्।।*

इससे यह स्पष्ट है कि इस पूजा को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, स्त्री, पुरुष, बाल, युवा, वृद्ध सभी कर सकते हैं क्योंकि यह सब पापों को नष्ट करके मुक्ति प्रदान करने वाला है। स्कन्द पुराण में लिखा है कि शिवरात्रि-पूजा फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी की अर्धरात्रि को करनी चाहिये । रात्रि के समय भूत, प्रेत, पिशाच शक्तियां और स्वयं शिवजी भ्रमण करते हैं। इसलिये उस समय इनका पूजन करने से सारे पाप दूर हो जाते हैं।

भगवान शिव देवों के देव हैं, भोले भंडारी हैं। सच्चे मन से प्रार्थना की तो कृपा का सागर बरसा दिया। शिवरात्रि पर तो भगवान दिल खोलकर दुलार लुटाते हैं। भक्त अपने भोले भंडारी के द्वार पर इच्छापूर्ति की कामना लेकर सुबह से ही पहुँच जाते हैं। कुछ घर पर ही सुख-समृद्धि के लिये प्रार्थना करते हैं।

श्रीकृष्ण जन्मस्थान से भगवान शिव की बारात निकाली जाती है। जिसमें विचित्र पोशाकों में भूतप्रेत, किन्नरदेव आदि सम्मिलित होकर बारात की शोभा बढ़ाते हैं। बारात में चंडी देवी व पुष्प के डोले सभी वातावरण को महकाते हैं। नंदी पर सवार दूल्हा बने भगवान शिव के स्वरूप के दर्शन कर श्रद्धालु निहाल हो उठते हैं। भगवान शिव के साथ देवता गंधर्व नृत्य करते चलते हैं। बारात में भगवान विष्णु, भैरों जी, भगवान रुद्र के गण विकृत, केकराक्ष, विकृतानन, विशाल, गणेश्वर, दुंदुभ, कपाल, कुंडल, काकपादोदर, प्रमय, वीरभद्र, मधुपिंड आदि स्वरूप भी होते हैं। सज रहे मेरे भोले बाबा दूल्हे के वेश में ..... गीत की मधुर गूँज भक्तों को आनन्दित करती है । सब नाचते-गाते हुए भोले की बारात में चलते हैं। शहर में भ्रमण करने के पश्चात बारात पुनः जन्मस्थान पहुंचती है और रात में शिवलिंग का अभिषेक किया जाता है।

# फुलैरा दौज

फाल्गुन शुक्ल पक्ष की द्वितीया तिथि को फुलैरा दौज की संज्ञा प्राप्त है। ज्योतिष के अनुसार तथा लोक जनमानस में इस तिथि को अधिकांश शुभ कार्यों के लिए विशेष शुभ तिथि माना जाता है । इसे अबूझ विवाह मुहूर्त भी माना जाता है। पूरे वर्ष में मुहूर्त न निकलने पर इस तिथि को विवाह सम्पन्न कराये जाते हैं किन्तु ब्रज में तो हर उत्सव ब्रजवासियों के प्राणप्रिय श्रीकृष्ण एवं लाड़िली श्रीराधा के लिए ही होते हैं। हर उत्सव किसी न किसी रूप में उनसे जुड़ा है। रसिक संतों की वाणी 'श्रृंगार सागर' में इसका संकेत मिलता है। बसंत ऋतु में नवीन सुकोमल सुगन्धित मदमाती गुलाब की पंखुड़ियों को देखकर रासेश्वर कृष्ण की रास करने की इच्छा हुई। उन्होंने रासेश्वरी श्रीराधा के साथ गोपियों के मध्य फुलैरा दौज पर बासंती महारास किया। श्रीमद्भागवत में भी इसका उल्लेख है। इसी के प्रतीक स्वरूप ब्रज के मंदिरों में फुलैरा दौज का उत्सव मनाया जाता है। चूंकि गुलाब गुलाबी रंग का होता है। अत: युगल सरकार ने भी रास में गुलाबी पोशाक धारण की थी। इसी कारण इस दिन मंदिरों में श्रीविग्रहों को फुलैरा दौज के दिन गुलाबी पोशाक धारण करायी जाती है। विद्वानों के अनुसार गुलाबी रंग श्रृंगार-रस का भी द्योतक है। चूंकि रास भी श्रृंगार रस प्रधान है । अत: श्रीविग्रहों के श्रृंगार में गुलाबी रंग की प्रधानता होती है। श्रीविग्रहों के मुखमंडल पर गुलाल लगाकर होली आने का संकेत सखियों द्वारा युगल सरकार को देने की ब्रज में परंपरा है। अधिकांश मंदिरों में इस दिन बेसन की पकौड़ी तथा मिष्ठान्न का युगल सरकार को भोग लगाया जाता है। इस दिन से होली की तैयारियां और अधिक तीव्र हो जाती हैं।

# बरसाने की होली

*स्वर्ग - बैकुंठ में होरी जो नाहीं।*

*तो कहा करैं लैं, कोरी ठकुराई।।* *(नागरीदास, सावंतसिंह)*

ब्रज-बरसाना की होली के प्रति यह भावाभिव्यक्ति कोई एक या दो दिन की बात नहीं। मात्र आयोजन अथवा मनोरथ के प्रदर्शन के रूप में ही नहीं बल्कि होली

को लेकर पिछले लगभग 500 वर्षों के दौरान रचा गया ब्रज-भाषा भक्ति साहित्य इस उत्सव के उत्स का परिदर्शन कराने वाला है। ब्रज में होली केवल खेली और गायी ही नहीं जाती अपितु इसके साहित्य सृजन की परम्पराओं ने इसे अन्तर्राष्ट्रीय पहिचान दिलाई है। होली के दौरान ''गारी गायन'' इस परम्परा की अपनी विशिष्टता है। यह ब्रज की होली का तत्कालीन आकर्षण ही था कि इसके प्रचुर लिखित साहित्यिक संदर्भों तथा इसके आयोजन की प्रक्रिया से प्रभावित होकर ब्रिटिश जिलाधिकारी एफ. एस. ग्राउस ने इसे अपनी ऐतिहासिक कृति मथुरा - ए-डिस्ट्रिक्ट मेमोयर में सविस्तार उल्लिखित किया है। लड्डू होली हो या लठामार होली, ब्रज की होली के बारे में जितना लिखा जाय, कम है जिसका प्रमाण इस लोकोक्ति से भी समझा जा सकता है कि - ''जग होरी, ब्रज होरा .....''

बरसाने की होली फाल्गुन शु० 9 को होती है। उससे एक दिन पहले नंदगांव का पंडा श्रीकृष्ण के सखा का प्रतीक बनकर बरसाने जाता है और वहाँ लाड़िली जी के मंदिर में पहुँचता है। मंदिर में बरसाने के सभी वयोवृद्ध गोस्वामी तथा विशिष्टजन एकत्र होते हैं। उस समय वहाँ समाज होती है। जिसमें होली के पदों का गायन-वादन किया जाता है। नंदगांव का पांडा वहाँ होली के रसियों का गायन करता हुआ नृत्य करता है और अपने गांव की ओर से बरसाने में होली खेलने का आह्वान करता है। जिसे बरसाने के गोस्वामीगण स्वीकार करते हैं। दूसरे दिन नंदगांव के हुरियारों की टोली भगवान श्रीकृष्ण और उनके सखाओं के प्रतीक रूप में सज-धजकर, गाते बजाते हुए राधारानी की सखियों के साथ होली खेलने बरसाने पहुंचते हैं। वे बगल-बन्दियों को तन पर धारण करते। सिरों पर रंगीन पाग पहनते हैं। उनके चेहरे चन्दन और गुलाल से चिते होते हैं। इस प्रकार वे ग्वालों का सा वेष बनाये हुये होली की उमंगों में झूमते तथा नाचते हुए बरसाने स्थित श्रीजी के मंदिर पहुंच जाते हैं। उस समय हुरियारों का वह दल भगवान श्रीकृष्ण के वहाँ पहुंचने के प्रतीक की सूचना में बरसाने की गोपियों को सम्बोधित करता हुआ रसिया गायन करता है।

*रसिया आयो रे तेरे द्वार खबर दीजो।*
*यह रसिया पौरी में आयौ, जाकी बांह पकर भीतर लीजो।।*

फिर वे लोग हुरियारिनों से होली खेलने की मनुहार करते है। रसिया गाते हैं-

*दरसन दै, निकसि अटा में ते।।*

*कोटि-रमा-सावित्री-भवानी तेरे निकसी है अंग छटा में ते।।*

*तू ऐसी वृषभानुनन्दिनी, जैसे निकस्यौ है चन्द्र घटा में ते।।*

*पुरुषोत्तम प्रभु यह रस चाख्यो, जैसे माखन निकस्यौ मठा में ते।।*

जग होरी ब्रज होरा का आगाज बरसाना की लड्डू की होली से होता है। इस परम्परा का पालन श्रद्धा-भक्ति के संग हर्ष-उल्लास के साथ किया जाता है। नवमी तिथि के दिन बरसाने में लठामार होली अत्यधिक धूमधाम से मनायी जाती है। ढप, मृदंग, झांझ, मंजीरा की धुन पर नाचते-गाते गोस्वामी नवयुवक भी खूब होली खेलते हैं। बरसाने की लठामार होली के विषय में भक्तिकाल के रसिक कवियों व वाणीकारों ने अपनी रचनाओं में सूक्ष्म रूप से वर्णन किया है। नारायण भट्ट चरितामृत के अनुसार एक वर्ष तक भट्ट जी ने लट्ठ और ढाल द्वारा लठामार होली का अनुसरण कराया। पहले राधारानी मंदिर में रंग की होली व समाज गायन का आयोजन होता है और इसके बाद रंगीली गली में नंदगांव, बरसाना के ब्राह्मण समुदाय के नर-नारियों के मध्य लठामार होली होती है।

इस होली के संबंध में हरिराम व्यास ने 'रतन जड़ित पिचकारी भरि-भरि छिरकत चतुर सुजान। कनक लकुट टैलन पर टूटत फिरत कुंवरि जू की आन' जयदयाल कवि ने अपनी रचना में लठामार होली का वर्णन किया है।

*नवल टैल पौरि रूपे कर जौरिन की ओर।*
*कपट मार छवि चारू दै दीनी काम कटोर।।*

नवमी तिथि के दिन श्रीजी धवल वस्त्र धारण कर भक्तों के संग होली खेलती हैं तथा इन्हें जलेबी, पूआ का भोग लगाया जाता है। पहले लाल, फिर हरा, इसके बाद गुलाबी और अंत में पीला कुछ ऐसे ही एक के बाद एक अलग-अलग रंगों से सराबोर रहता है राधारानी का धाम । गुलाल के गुबार से यहां रंगीन बादलों का सा नजारा बन जाता है। राधारानी के मंदिर में पद गायन में मस्त गोस्वामियों पर रंग की बरसात कर दी जाती है। गुलाल के गुबार उड़ाये जाते हैं। यहां लठामार होली का नजारा देखने के लिये गलियों के साथ छत और छज्जों पर भी लोगों का हुजूम जमा हो जाता है।

होली पर बरसाने में तरह-तरह के रंग बरसे, अबीर-गुलाल उड़ा होली की मस्ती में नन्दगांव के हुरियारे बरसाने की गलिन में छैल-छबीली गोपियों से बरजोरी करने लगते हैं। रंगीली गली में सजी-संवरी हुरियारिनों से हँसी ठिठोली करते हैं। मर्यादायें पार हुई तो हुरियारिन हर शरारत पर सबक सिखाती हैं। गली-गली में घेरकर हुरियारों पर लट्ठ बरसाती हैं। बचाव के लिये हुरियारे अपनी गलती के लिये कभी कान पकड़कर माफी माँगते हैं तो कभी उठक-बैठक लगाते हैं। मगर हुरियारिनें उन्हें छोड़ने के मूड़ में नहीं रहतीं, उन्हें गली में दौड़ा-दौड़ाकर पीटती हैं। चारों दिशाओं में राधे-राधे की गूंज होती है।

## नंदगाँव की होली

बरसाने की होली के दूसरे दिन फाल्गुन शु॰ 10 को नंदगांव की होली होती है। इस दिन बरसाने के हुरियारे राधारानी की सखियों के प्रतीक स्वरूप नंदगांव होली खेलने जाते हैं। वे लोग राधाजी की ध्वजा लेकर गायन-वादन और नृत्य करते हुये नंदगांव पहुंचते हैं। वहां पर सबका भांग, ठंडाई और रंग-गुलाल से स्वागत किया जाता है। उसके बाद नंदराय जी के मंदिर में समाज होती है। जिसमें नंदगांव और बरसाने के गोस्वामीगण होली के पद, लोकगीत और रसिया आदि का गायन करते हैं। फिर मंदिर के आंगन में दोनों ओर के दल परस्पर होली खेलते हैं। संगीत-समाज और होली के अनन्तर बरसाने के लोग नन्दराय जी के मंदिर से उतरकर नीचे मैदान में आते हैं। जहां नंदगांव की गोपियां सज-धजकर लम्बे-लम्बे घूंघट काढ़े हुए और बड़े-बड़े लट्ठ लिये उनके साथ लठामार होली खेलने को तैयार मिलती हैं। यहां भी बरसाने की तरह हुरियारों पर प्रेमपगी लाठियाँ बरसाती हैं। प्रेम का यह कैसा बदला ? बरसाना के हुरियारे नन्दगांव में फगुआ लेने जाते हैं।

*कल खेल आयो बरसाने, आज होए तेरे द्वारे।*

श्रीजी संग होली खेलने के बाद हुरियारों की टोली नन्दबाबा के द्वारे होली खेलने पहुँचती है। उनका यहाँ भी उसी तरह स्वागत होता है जिस तरह बरसाने में हुआ था। दोपहर को नन्दबाबा बैठक स्थित नन्दबाबा मंदिर यशोदा कुण्ड पहुंचते हैं। जहां भांग-ठंडाई छान शाम ढलते ही हाऊ-विलाऊ और दूध बिलोना के दर्शन

कर नन्दबाबा मंदिर की ओर नन्दलाला की जयघोष करते हुये बढ़ जाते हैं। नन्दबाबा मंदिर में बरसाना और नंदगांव के गोस्वामी समाज का आमना-सामना होता है। फिर समाज गायन और रंग की बौछार के बीच होली होती है। इसके बाद हुरियारे सीधी रंगीली गली में उतरते हुये रंगीली चौक पर पहुंचते हैं। जहाँ उन्हें हुरियारिनों की प्रेम पगी लाठियों का सामना करना पड़ता है।

## रंग भरनी एकादशी

फाल्गुन शुक्ल एकादशी को आमलकी एकादशी कहा जाता है। इस दिन से ही वृन्दावन में होली प्रारम्भ हो जाती है। यही कारण है कि यह तिथि रंगभरनी एकादशी के नाम से प्रसिद्ध है। श्रीबांके बिहारीजी के मंदिर में एकादशी की शाम से ही होली का रंगोत्सव प्रारम्भ हो जाता है। श्रीराधावल्लभजी के मंदिर में भी रंगभरनी होली इसी दिन से शुरू हो जाती है। श्रीजी के मंदिर से सवारी नगर भ्रमण करती है और शाम को भक्त श्यामा-श्याम के फाग में रसावोर हो जाते हैं। श्रीराधादामोदर मंदिर में रंगीली दशमी से होली महोत्सव की शुरुआत होती है। इसी प्रकार अन्य मंदिरों में भी रंगभरनी एकादशी से ही ठाकुरजी की होली का पूरे जोर शोर से आरम्भ होता है। जिसके साथ ही मंदिरों में समाज गायन प्रारम्भ हो जाता है। जिसमें रसिया, होली धमार के पद आदि गाये जाते हैं। जिससे चारों ओर का वातावरण रंगीला हो जाता है।

रंगभरनी एकादशी से ही समस्त मंदिरों में फाग-उत्सव प्रारम्भ हो जाते हैं। नगर में सवारी निकलती है। ये उत्सव दौज तक चलते रहते हैं। चैत्र वदी दूज को ब्रज की होली देखने के लिए देशी व विदेशी पर्यटक भी आते हैं और कुछ तो होली खेलने के लिये शामिल भी हो जाते हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि होली का त्योहार अबीर-गुलाल का त्योहार है। केसर के रंगों का पर्व है। देवर-भाभी व जीजा-साली के हास्य-व्यंग्य का उत्सव है। वैदिककाल में इसी दिन से नये वर्ष का शुभारंभ माना जाता था। सदियों से यह उत्सव राग-रंग के त्योहार के रूप में ही मनाया जा रहा है। होलिकोत्सव को बसंतोत्सव व ऋतुत्सव के नाम से भी वर्णित किया है।

इस दिन सायंकाल के समय धवल वस्त्र धारण कर चाँदी के सिंहासन पर जगमोहन में विराजमान होकर ठा0 बांकेबिहारी जी महाराज चाँदी की पिचकारी से भक्तों के संग होली खेलते हैं। यह क्रम शयनभोग आरती तक चलता है। इस दौरान मंदिर में होली के रसिया और पदों का गायन होता है। शयनभोग में जलेबी परोसी जाती हैं।

*ऐसौ उड़ रहौ अबीर गुलाल यामैं खोय गयौ साँमरौ प्यारौ।।*

इसके साथ वृन्दावन के कण-कण में राधाकृष्ण का आलौकिक माधुर्य बिखरता है। ब्रज की दिव्य व अनूठी प्रेमभरी रंगीली होली मंदिरों में अधिक उत्साह से मनायी जाती है। अबीर-गुलाल से आसमान सतरंगी हो जाता है। वृन्दावन के प्रमुख मंदिरों में ठाकुरजी के साथ होली खेलने के लिये जन सैलाब उमड़ जाता है। ठाकुर बांकेबिहारी, राधावल्लभ मंदिर, राधारमण, राधादामोदर, श्यामसुन्दर सहित अन्य मंदिरों में रंग भरनी का उत्सव मनाया जाता है। ठा0 राधावल्लभलाल भक्तों के संग स्वर्ण, रजत निर्मित पिचकारियों से टेसू के रंग से होली खेलते हैं। मंदिर प्रांगण राधाबल्लभलाल के जयकारों से गुंजायमान हो जाता है। ठाकुरजी को रोजाना गुलाल लगाया जाता है। इस अवसर पर ठाकुरजी को धवल वस्त्र धारण कराये जाते हैं। रंग-गुलाल की झाँकियों के साथ बसंत राग के पदों का गायन किया जाता है। इस अवसर पर ठाकुरजी को जलेबी, हलुआ तथा ठंडाई का विशेष भोग लगाया जाता है।

रंगभरनी एकादशी का सबसे बड़ा उत्सव मथुरा में श्रीकृष्ण जन्मस्थान में मनाया जाता है। प्रात: से ही मुख्य मंच पर विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रारम्भ हो जाते हैं। इस दिन ब्रज के विविध क्षेत्रों से आये प्रसिद्ध कलाकार अपने मनभावन कार्यक्रम प्रस्तुत कर हजारों देशी-विदेशी भक्तों को होली की मस्ती में सराबोर कर देते हैं। फूलों की होली और लठामार होली तथा चरकुला और तख्त नृत्य जैसे चित्ताकर्षक कार्यक्रम भी कलाकारों के दल प्रस्तुत करते हैं।

मथुरा के इस आयोजन को देश दुनिया के सुदूर अंचलों के लोगों तक पहुँचाने के लिये आकाशवाणी और दूरदर्शन की टीमें पहले से ही डेरा लगा लेती हैं। चारों ओर से फुव्वारों से गुलाल की बौछार होती है जिससे इन्द्रधनुषी छटा बन जाती है। रसिक झूमते हैं। रावल की गोपियाँ यहाँ लठामार होली खेलती हैं।

जन-समुदाय श्रीराधाकृष्ण के जयकारों के साथ प्रसन्नचित्त हो अपने-अपने गंतव्य को लौटा जाता है।

## होलिका-दहन (होलिकोत्सव)

शीतकाल की विदाई होते ही बसन्त ऋतु के अन्तर्गत फाल्गुन मास उमंग भरकर इठलाता हुआ आया और विश्व प्रसिद्ध ब्रज की होली का साकार दर्शन हुआ। लोकोक्ति है- जग होरी ब्रज होरा अर्थात् होली का चरम रूप ब्रज में ही आकार लेता है।

फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को होलिका-उत्सव मनाया जाता है। गोबर की गूलरी, ढाल, तलवार बनाकर स्त्रियां दिन में पूजा करती हैं। होलिका दहन रात्रि के समय होता है। चतुर्दशी को पूर्णिमा आ जाती है। उसी रात्रि में जब भद्रा न हो तब होलिका दहन होता है। एक स्तम्भ प्रहलाद का होता है। उसके चारों तरफ गोबर के बने ढाल बिड़कला तथा लकड़ी लगाई जाती हैं। ऐसा कहते हैं कि प्रहलाद बच गए तथा होलिका राक्षसी जल गयी। होलिका-दहन के समय जौ, गेहूँ आदि को होलिका में भूनकर लाते हैं। मंदिरों में श्री ठाकुरजी के समक्ष होलिका दहन का आयोजन किया जाता है और सबको बाँटते हैं। होली जलाने के बाद रात्रि में गायन, वादन और नृत्य करने का विधान है—

*गीत वाद्यौस्तथां नृत्यैः रात्रिः सा नीयते जनैः।*

दूसरे दिन होली की राख शरीर पर लगाने से वैभव की वृद्धि होना माना गया है। जनता में यह पर्व होली दंड या प्रहलाद नाम से प्रसिद्ध है। किन्तु इसे नवान्नेष्टि का यज्ञ स्तंभ माना जाता है। होलिका दहन को नवान्नेष्टि यज्ञ के रूप में मनाने का एक कारण है। इस अवसर पर नवीन धान्य, यानी जौ, गेहूँ और चना की फसल पककर तैयार हो जाती है। अतः फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को समिधा स्वरूप उपले आदि एकत्र करके उसमें यज्ञ विधि से अग्नि की स्थापना, प्रतिष्ठा, प्रज्ज्वलन पूजन करके जौ के बालों की आहूति दी जाती है और धान्य को घर पर लाकर प्रतिष्ठित किया जाता है।

ब्रज में होलिका दहन के दौरान होलिका मइया व गोदी में बैठे प्रहलाद की

मूर्ति रखने की परम्परा है। दहन से पूर्व होलिका की मूर्ति का सोलह श्रृंगार कर पूजा की जाती है। उसके बाद होलिका दहन होता है। बुराई का त्यागकर अच्छाई को अपनाने का यह त्यौहार जिस तरह उत्साह के साथ शुरू होता है उसी उमंग एवं सम्मान के साथ इसको विदा भी किया जाता है। ब्रज की इसी संस्कृति ने सम्पूर्ण भारतवर्ष में ब्रज की एक अलग पहचान बनायी है।

विगत 25-30 वर्षों से ब्रज से होलिका दहन के दौरान होलिका मइया व गोदी में बैठे प्रहलाद की मूर्ति रखने की परम्परा चल पड़ी है। इस परम्परा का सर्वप्रथम प्रारम्भ मथुरा की होली वाली गली से हुआ था।

देव संस्कृति जीत गई। राक्षसी माया संग शक्ति संस्कृति पराजित हो जाती है। वरदानी होलिका भी बच नहीं पाती है और धू-धू कर राख बन जाती है। प्रहलाद को बचाने के लिये त्याग करने वाली होली को मां का दर्जा देकर खूब जय-जयकार करते हैं। होलिका दहन का उत्साह सूर्य के अस्तांचल की ओर चलने के साथ ही बढ़ता चला जाता है। चौराहों, तिराहों, दौराहों संग एकराहों पर भी होली पधराई जाती है। होली के रसियाओं संग ब्रज के अन्य अनेक लोकगीतों का सस्वर गायन शुरू हो जाता है। होलिका दहन के बाद जौ का आदान-प्रदान का दौर शुरू हो जाता है।

## डोलोत्सव (धुलैंडी)

चैत्र वदी प्रतिपदा को यह उत्सव मनाया जाता है। इस दिन ब्रज के मंदिरों में गुलाब डोल सजाये जाते हैं। इन गुलाबों से निर्मित डोलों में श्रीयुगल (राधाकृष्ण) रात्रि के समय झूला झूलते हैं। इन डोलों के दर्शन रात्रि में ही भक्तों को करवाये जाते हैं। इस अवसर पर समाज गायन होता है।

चैत्र के प्रथम पखवाड़े में मथुरा-वृन्दावन के मंदिरों में फूलडोल होते हैं। उनमें देव-मूर्तियों का फूलों से श्रृंगार किया जाता है और मंदिरों में फूल बंगले बनाये जाते हैं। फूलडोलों की धार्मिक परंपरा के कारण ही ब्रज की पुष्प-श्रृंगार कला अभी तक जीवित है। ये उत्सव बाहर के बगीची-अखाड़ों में भी मनाये जाते हैं। इस अवसर पर एक-एक दिन एक-एक ओर के बगीची-अखाड़ों की मरम्मत,

सफेदी, सफाई से ठीक किया जाता है और चित्रकारी से उन्हें सजाया जाता है। वहाँ की सजावट में स्थानीय विद्वानों, कवियों, कलाकारों के दुर्लभ चित्र लगाये जाते हैं तथा झाड़, फानूस, दर्पण, चित्र, पिछवाही आदि प्राचीन कलात्मक वस्तुओं का प्रदर्शन किया जाता है। इसके साथ ही साथ गायन-वादन के सरस कार्यक्रम भी होते हैं जो प्राय: रातभर चलते हैं। वृन्दावन के श्री बांकेबिहारी जी के डोलोत्सव के दर्शन हेतु विश्व भर से भक्त यहाँ आते हैं ।

*फूलन की मंडली मनोहर बैठे जहाँ रसिक पिय-प्यारी।*
*फूलन के बागे और भूषन, फूलन ही की पाग सँभारी॥*
*ढिंग फूली वृषभानुनंदिनी, तैसिय फूल रही उजियारी।*
*फूलन के झूमका-झरोखा, बहु फूलन की रची अटारी॥*
*फूले सखा चकोर निहारत, बीच चन्द मिल किरन पसारी।*
*'चतुर्भुजदास सब मुदित सहचरी, फूले लाल गोवर्धन धारी॥*

होलिका-दहन के दूसरे दिन सायंकाल के समय भगवान को हिंडोले में विराजमान कर उनका पूजन करके झुलाया जाता है और आरती करके यथास्थान विराजमान करते हैं। इस उत्सव को डोलोत्सव या डोलयात्रा कहते हैं। जो कलियुग का एक महत्वपूर्ण उत्सव है। यह डोल यात्रा भगवान श्रीकृष्ण की होती है। कहते हैं- डोल स्थित कृष्ण के दर्शन से सकल पाप नष्ट हो जाते हैं। स्कन्दपुराण में डोलोत्सव के संबंध में कहा गया है कि इस उत्सव में गोविन्द स्वयं जनगण के आमोद-प्रमोद के लिये क्रीड़ारत होते हैं। सोलह स्तम्भों वाला वेदिकायुक्त मंडप इस समय बनाया जाता है। जिसे चार-चन्द्रातप, माला, चामर तथा ध्वज-वन्दनवार से सुसज्जित और सुशोभित किया जाता है। वेदी पर पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण की प्रतिमा स्थापित की जाती है। इन्हें विविध भाव से पूजा जाता है। तूर्यनाद, शंख ध्वनि, जय शब्द, स्तोत्र पाठ, ध्वज पताका, चामर और व्यंजन आदि तरह-तरह के उपकरणों से महोत्सव होता है। श्री गोविन्द को हिंडोले में स्थित कर सुलाया जाता है।

होली या डोल यात्रा के सम्बन्ध में एक अन्य कथा इस रूप में प्रचलित है कि भगवान विष्णु ने होलिका या शंखचूड़ का वध कर होलिकोत्सव किया था। होलिका दहन का उत्सव कहीं-कहीं स्मरण शान्ति का प्रतीक माना जाता है।

इस दिन चतुर्दश मनुओं में से एक मनु का जन्म माना जाता है। इसलिये यह मन्वादि तिथि भी है। कुछ शास्त्रकारों ने इसे अग्नि का प्रतीक स्वरूप मानकर उसका पूजन बताया है।

इस दिन सभी लोग एक दूसरे को गुलाल लगाकर बधाई देते और गले मिलते हैं।

## दाऊजी की होली

बसन्त ऋतु के आगमन के साथ जहाँ सम्पूर्ण प्रकृति अत्यन्त आह्लादित हो उठती है। वहीं जनमानस में भी एक विशिष्ट रस का संचार होने लगता है। विशेष रूप से ब्रजमण्डल का अनुपम सौन्दर्य भाव मुखरित होकर ऋतुराज के आगमन का स्वागत करता हुआ रस विभोर हो जाता है। सम्पूर्ण ब्रज मण्डल के प्राय: समस्त ख्यातिनाम देवालयों में परम्परागत बसन्तोत्सव का भी श्रीगणेश हो जाता है।

रंग भरी पिचकारियाँ परम्परागत टेसू के पुष्पों से संसाधित सुगन्धित युक्त रंग और सात रंगों के गुलालों की घुमड़न एक दैवी कल्पना को साकार कर देते हैं। जहाँ तक देवालयों के उत्सवों को मनाने की भी अपनी-अपनी विभिन्न मनोरथों से युक्त परम्पराएँ अपने वैशिष्ट्य को प्रस्तुत करती हुई देवानुरंजन के क्रम को सार्थक बना देती हैं। इसी श्रृंखला में दाऊजी महाराज के देवस्थान की भी विशिष्ट परम्परा अनूठी है। श्री दाऊजी का नाम कामपाल भी है। अत: इस मदन महोत्सव के मुख्य देवता भी निश्चित रूप से भी बलदेव जी एवं श्री कृष्ण एवं प्रकृति रूप श्री रेवती जी एवं श्रीराधारानी एवं उनकी सहचरी सखियाँ हैं।

श्री दाऊजी के देवालय में यह उत्सव माघ शुक्ला बसंत पंचमी से प्रारम्भ होकर चैत्र कृष्ण पंचमी तक चलता है। डांडा रोपण के साथ ही बसन्त ऋतु की स्वर लहरियाँ मंदिर में गूँजने लगती हैं। खेलन बसन्त बलभद्रदेव, लीला अनन्त कोई लहै न भेद॥ जैसे पदों का गायन झांझ, डफ, हारमोनियम, मृदंगादि परम्परागत वाद्यों के साथ प्रारम्भ हो जाता है। मध्याह्न की समाज में "मैतो जाइपै वसंत धरोंगी, जिन वारे सों वहियां गही।" सारंग राठी जैसे रागों में निबद्ध होती है। गायन होता है। जैसे ही फागुन मास का आगमन होता है। पूर्णिमा के ही दिन पुन: होरी डांडे की

परम्परा का निर्वहन करते हुए काफी धमार जैसी होली के रागों का गायन प्रारम्भ हो जाता है।

फाल्गुन मास में मन्दिर में परम्परागत चार समाज होती हैं। श्रृंगार आरती, राजभोग आरती एवं रात्रि समाज का विशिष्ट महत्व होता है तथा प्रतिदिन पृथक-पृथक पदावलियों का गायन विभिन्न रागों में निबद्ध होता है। इस परम्परा में झांझ, डफ, मृदंग एवं नगाड़े जैसे वाद्य हारमोनियम आदि स्वर वाद्य बजाये जाते हैं। समस्त ब्रज मण्डल में दाऊजी की समाज गायन की एक अनूठी परम्परा है।

होली की पूर्व संध्या से मन्दिर में निरन्तर गुलालों की वर्षा होने लगती है एवं श्रृंगार आरती के समय श्री ठाकुरजी परम्परागत दिव्य सुगन्धित केसरिया रंग से होली खेलते हैं। सतरंगी गुलालों के उड़ने से अत्यन्त मनोहारी वातावरण उत्पन्न हो जाता है। होलाष्टक से पूर्व मात्र गुलाल की होली होती है। ठाकुरजी के लिये दिव्य-सुगन्धित रंगों को टेसू के फूलों से मंदिर के रसोईघर में बनाया जाता है। गुलाल की घुमड़न एवं दिव्य वाद्यों की स्वर लहरी से भक्ति अपने आपको कृत-कृत्य अनुभव करती है।

होली की पूर्णिमा के दिन से उत्सव अपने चरम यौवन पर होता है। रात्रि की समाज में फिर डांडा रोपा जाता है। पूर्णिमा के दिन होली पूजन की परम्परा ब्रज के अलावा कहीं और देखने को नहीं मिलती। सायं उत्थापन के दर्शनों के बाद समस्त सेवायत होली पूजन के समारोह में सम्मिलित होते हैं। पूर्णिमा के दिन यहाँ शोभायात्रा निकलती है, जो समस्त परिक्रमा मार्ग को पूरा करती हुई होली तक जाती है। मार्ग में— ऐरी सखि निकसे हैं श्री बलराम खेलन ब्रज में फाग हो' स्वर लहरी स्फुटित होती है। जहाँ मुनि मन है गाये वावरे भई सरस्वति मति मौन' खेलन ब्रज में फाग हो' की दिव्यानुभूति स्वयं होने लगती है। इस शोभायात्रा में करीब दो किलोमीटर लम्बी मानव श्रृंखला, अपने हाथों में परम्परागत आयुधों को धारण करते हुये श्री दाऊजी के आयुध हल और मूसल का दर्शन भगवदीय वातावरण में ले जाता है। ठाकुरजी के नित्य फगुवा भोग की झाँकी के बाद शयन भोग आते हैं।

प्रतिपदा के दिन नित्य नियम की होली एवं सेवा श्रृंगार तथा महामाघ में महारास का आयोजन होता है। इसमें परम्परागत वाद्यों के साथ शहनाई एवं नगाड़े की महत्वपूर्ण प्रस्तुति होती है। इसमें सेवायत गोस्वामियों के वंशज अपनी भाभियों

के साथ श्री ठाकुर जी के सामने जगमोहन प्रांगण में नृत्य करते हैं। श्री ठाकुर जी के उत्सव को मनाते हैं।

चैत्र वदी द्वितीया के दिन हुरंगा होता है । यह विश्व प्रसिद्ध उत्सव है। इस उत्सव में नित्य पूजा-अर्चना व समाज गायन के बाद राजभोग उतरने के उपरान्त पुनः समाज गायन होता है। यह रंग गुलालों का ब्रज का एक अद्‌भुत उत्सव है। मन्दिर प्रांगण में 4 फीट गहरे, 20 फीट लम्बे 4 हौज बने हैं। जिनमें टेसू के फूलों से रंग तैयार किया जाता है। सम्पूर्ण मन्दिर प्रांगण में एवं देवालय में तिल रखने की भी जगह नहीं होती। इस उत्सव का आनन्द लेने के लिये हजारों दर्शनार्थी आते हैं।

श्री ठाकुरजी के प्रतीक श्रीकृष्ण बलदेव के रूप में दो झण्डों को मंदिर में स्थापित किया जाता है। समाज होने के पश्चात श्री ठाकुर जी की आज्ञा लेकर हुरंगा उत्सव शुरू होता है। इसमें सेवायत समाज के देवर अपनी भाभियों के साथ होली खेलते हैं। इस उत्सव में तीन घण्टे का समय लगता है। मन्दिर की छतों से गुलाल की वर्षा होती है एवं केसरिया रंग की भरी पिचकारी की धार बरसती है। देवर-भाभी की इस होली का दृश्य बहुत अनूठा और अनुपम है। देवर भर-भर डोलची से भाभियों पर रंग डालते हैं। फागुन ममें जेठ कहै भाभी - कहावत दाऊजी में चरितार्थ होती है। जेठ भी भाभियों से होली खेलते हैं। भाभियाँ हुरियारों पर प्रेम भरे कोड़े बरसाती हैं।

हुरंगा पूर्ण होने पर सभी ठाकुरजी के देवालय की परिक्रमा को निकलते हैं। और इठलाते हुये गीत गाते चलते हैं कि

*'हारी रे गोरी घर चली और जीत चले नन्दलाल'*

उधर भी ग्वालों को गोपियाँ चिढ़ाते हुये गाती हुई प्रस्थान करती हैं कि 'हारे लाल घर चले जीत चली ब्रजनार' इस प्रकार उत्सव का आयोजन तीन दिन तक चलता है। पंचमी को मध्याह्न में राजभोग के समय समाज होती है। ठाकुरजी डोल में विराजित होते हैं।

*जौ जीवै सो खेलै फाग हरि संग झूमरि खेलियै,*

इस पद का गायन करते हैं। सायंकाल मन्दिर प्रांगण में दाऊजी के भक्तों की मंडलियाँ अनेकानेक परम्परागत वाद्य बम्व, डफ, झांझ खड़तालों की लय पर एक

अनुपम समां बांध देता है। इस प्रकार दाऊजी के होली महोत्सव का समापन होता है।

## वृन्दावन के रंगजी मंदिर का श्री ब्रह्मोत्सव (रथ का मेला)

सम्पूर्ण भारतवर्ष के वैष्णव अनुयायियों द्वारा वृन्दावन के श्री रंगजी मंदिर में मनाये जाने वाले धार्मिक अनुष्ठान ब्रह्मोत्सव को स्थानीय भाषा में ब्रजवासी रथ के मेले के नाम से जानते हैं क्योंकि इस उत्सव का प्रमुख आकर्षण विशाल रथ होता है। धार्मिक मान्यता के अनुसार इस उत्सव को सर्वप्रथम श्री ब्रह्मा जी द्वारा प्रतिपादित किया गया था। अत: इसे ब्रह्मोत्सव कहा जाता है। श्री वैष्णव सम्प्रदाय के इस मन्दिर में पंचरात्र आगम विधि द्वारा पूजन आदि की व्यवस्था है। वस्तुत: ब्रह्मोत्सव श्री विग्रह का प्राण प्रतिष्ठा महोत्सव होता है। जिसे पाटोत्सव कहा जाता है। इस सम्प्रदाय में तिथि के स्थान पर नक्षत्रों की प्रधानता होती है। इस दस दिवसीय उत्सव का शुभारम्भ दक्षिणार्थ पूजा पद्धति के पूजन द्वारा चैत्र कृष्ण तृतीया को होता है। जिसमें प्रतिदिन प्रात: तथा सायंकाल को श्री गोदा रंगमन्नार भगवान की सवारी (शोभायात्रा) विभिन्न स्वर्ण-रजत वाहनों पर पूर्ण कोठी, सिंह, सूर्य प्रभा, हंस, गरुड़जी, हनुमान जी, शेष, कल्पवृक्ष, पालकी, सिंह शार्दूल, काँच का विमान (होली), हाथी पर विशाल शोभायात्रा प्रतिदिन श्री रंग मंदिर से प्रारम्भ होकर बगीचा तक जाती है। वैसे तो श्री भगवान के विभिन्न रूप-स्वरूपों में नित्य दर्शन होते हैं किन्तु मुख्य आकर्षण रथ की सवारी का होता है। विशाल सुसज्जित रथ में विराजमान श्रीगोदारंगमन्नार भगवान के रथ को भक्त मोटे-मोटे रस्सों से खींचते हैं।

कहा जाता है कि रथ की रस्सी को जो भक्त अपने हाथों से खींचते हैं उन्हें मोक्ष मिलता है। वे योनियों के आवागमन से मुक्त हो जाते हैं। इस रथ के मेले में धर्म, जाति, सम्प्रदाय आदि की मर्यादायें ध्वस्त हो जाती हैं तथा सभी वर्ग की जनता इसमें भाग लेती है। यहाँ तक भी देखा गया है कि विपरीत धर्मावलम्बी, गैर हिन्दू भी इस मेले में आकर अपनी सहभागिता करते हैं। यह उत्तर भारत का सबसे विशाल रथ है। अब तो आने-जाने के बहुत संसाधन हो गये हैं। अब से 40-50 वर्ष पूर्व तक

आस-पास के ग्रामीण अंचल के भक्त बैलगाड़ियों में प्रभु के दर्शन के लिये आते थे तथा मेले में बिकने वाली जलेबियों का आनन्द लेते हुये अनेक प्रकार के झूले तथा मनोरंजनों का मेले में आनन्द उठाते थे। भीड़ तो अब भी बहुत होती है किन्तु अब भक्त दूसरे आधुनिक संसाधनों से आते हैं तथा सहभागिता करते हैं।

इस उत्सव में दो दिन आतिशबाजी का भी श्री भगवान के समक्ष प्रदर्शन होता है जिसे छोटी तथा बड़ी आतिशबाजी के नाम से जाना जाता है। जिस दिन भगवान श्री हनुमान जी के कन्धों पर विराजमान होते हैं। उस दिन की आतिशबाजी छोटी तथा रथोत्सव के दूसरे दिन स्वर्ण घोड़े पर विराजमान श्रीविग्रह के समक्ष होने वाली आतिशबाजी को बड़ी आतिशबाजी कहा जाता है। इन दोनों दिन भी अपार भीड़ होती है। यह मेला वास्तव में वृन्दावन का एक अति विशिष्ट उत्सव है। जो दस दिन तक एक मेले के रूप में मनाया जाता है। इसमें तरह-तरह के झूले, विभिन्न तरह के मनोरंजन के प्रदर्शन, नित्य प्रयोग की वस्तुएँ एक ही स्थान पर आसपास की जनता को उपलब्ध होती हैं। यही कारण है कि उत्सव में 'गोरस बेचत श्रीकृष्ण मिले एक पंथ दो काज' वाली पंक्ति चरितार्थ होती है। इसी कारण स्थानीय भक्त पूरे वर्ष इस मेले की प्रतीक्षा करते हैं तथा उत्सव आने पर पूर्ण सहभागिता प्रदान करते हैं। श्री रंग मंदिर की उत्सव परम्परा में चैत्र मास में आयोजित श्री ब्रह्मोत्सव के दस दिवसीय आयोजनों का विशेष महत्व है। इनके अन्तर्गत प्रतिदिन प्रातः एवं सायंबेला में निकलने वाली विभिन्न सवारियों में स्वर्ण एवं रजत निर्मित वाहनों का प्रयोग किया जाता है। सवारियों पर प्रभु की मनोहारी छटा, मानस में एक नई आध्यात्मिक चेतना का संचार करती है।

ब्रज संस्कृति उत्सवधर्मी है। ब्रज की हृदयस्थली श्रीधाम वृन्दावन में वैसे तो वर्ष-पर्यन्त कहीं न कहीं उत्सव, मनोरथों का आयोजन आम बात है लेकिन रंगजी मंदिर की परंपरा में श्रीब्रह्मोत्सव जनमानस को सहज ही अपनी ओर आकर्षित करता है। दक्षिण भारतीय परम्परानुसार संचालित रामानुज सम्प्रदाय के इस मंदिर के मनोरथों एवं आयोजन के मूल प्रसंगों से अधिकांश स्थानीय वर्ग अनभिज्ञ ही रहा है। जिसके चलते लोगों ने यहाँ आयोजित कुछ मनोरथों को अपने नाम भी दे रखे हैं। लोक में इनकी ख्याति कुछ इस तरह हुई कि सामान्य वार्तालाप में इन उत्सवों को ऐसे ही नामों से सम्बोधित करते हैं।

आयोजित ब्रह्मोत्सव के अवसर पर पूर्ण कोठी, सिंह, सूर्यप्रभा, चन्द्रप्रभा, गरुड़जी, श्री हनुमान जी, श्री शेष जी, कल्पवृक्ष, पालकी, सिंह शार्दूल, काँच का विमान, हाथी, घोड़ा एवं पुष्प विमान आदि सवारियाँ विशेष आकर्षण होती हैं। यमुना स्नान, गेंद वच्छी एवं प्रणय कलह आदि मनोरथ भी होते हैं। जिनकी अलग-अलग मान्यतायें हैं। प्रत्येक सवारी के निकलने के समय तथा मंदिर से बड़े बगीचे पहुँचने से पहले तथा वापस लौटने से पहले यहाँ धूर का गोला दागा जाता है। जिसकी गूँज पूरे वृन्दावन शहर में सुनी जा सकती है। यह संकेत जनमानस को सवारी निकलने की सूचना देता है।

ब्रह्मोत्सव का अर्थ है- ब्रह्मा का उत्सव। इसमें श्री गोदारंगमन्नार भगवान स्वर्ण व रजत निर्मित नाना प्रकार के वाहनों पर विराजमान होकर प्राणी मात्र के कल्याणार्थ दर्शन देते हैं। गोदारंगमन्नार भगवान के दर्शन मात्र से ही प्राणी का कल्याण हो जाता है और भक्तों की सभी मनोकामनायें पूर्ण होती हैं।

विश्व में सर्वप्रथम भगवान के श्रीविग्रह का जो उत्सव ब्रह्माजी ने किया, वही ब्रह्मोत्सव है। चैत्र मास की प्रतिपदा से आरम्भ होकर दस दिनों तक चलने वाला यह ब्रह्मोत्सव स्वयं में अनूठा और सुधि भक्तजनों के लिये आकर्षण का केन्द्र होता है। ब्रह्मोत्सव के अन्तर्गत प्रतिदिन सुबह एवं सायं बेला में एक नई झाँकी भक्तों को दिव्यानंद की अनुभूति कराती है। इस उत्सव का एक अन्य आशय यह भी है कि किसी भी धर्म या जाति का व्यक्ति भगवान के दर्शनों से वंचित न रह जाए, इसी कारण भगवान स्वयं उसे दर्शन देने इन दिनों मंदिर से बाहर आते हैं।

**शुभारम्भ —**

उत्सव को प्रारम्भ करने के लिये सर्वप्रथम भगवान के पार्षद श्री विष्वकसेन जी का आह्वान तथा पूजन किया जाता है। उसके बाद अगले दिन से प्रभु की सवारी जिन मार्गों से सुबह-शाम गुजरेगी, उस मार्ग का निरीक्षण करने के लिये विष्वकसेन जी की सवारी निकाली जाती है। जिसे जनमानस सड़क साफ सवारी कहते हैं। श्री ब्रह्मोत्सव के अन्तर्गत प्रात: शुभ मुहूर्त में ध्वजारोहण की परम्परा है। उत्सव का शुभारम्भ ध्वजारोहण करके किया जाता है। उसके बाद भगवान की सवारी नगर भ्रमण करने के लिये निकलती है।

**श्री ब्रह्मोत्सव की सवारियाँ—**

ब्रह्मोत्सव के दौरान निकलने वाली सवारियाँ इसका मुख्य आकर्षण होती हैं। आम लोगों का इनके प्रति प्रबल आकर्षण और उत्साह देखने को मिलता है। सवारी देखने के लिये हजारों श्रद्धालु अपने सारे कामों को निपटाकर दर्शन करने के लिये जाते हैं।

**पूर्ण कोठी—**

चैत्र कृष्ण पक्ष में चल रहे ब्रह्मोत्सव के प्रथम दिन पूर्ण कोठी की सवारी निकलती है। जनमानस में यह सवारी इसी नाम से प्रचलित है। वास्तव में इसका नाम पुण्य कोठी माना जाता है।

**सिंह वाहन—**

इसी दिन सायंकाल के समय सिंह वाहन की सवारी निकलती है। इसमें श्रीगोदारंगमन्नार भगवान अकेले ही भ्रमण के लिये निकलते हैं। यह प्रभु के सर्वशक्तिमान रूप के दर्शन हैं। इनके दर्शन मात्र से मनुष्यों को यश की प्राप्ति होती है।

**सूर्य प्रभा—**

श्री ब्रह्मोत्सव के दूसरे दिन सुबह के समय सूर्य प्रभा के मध्य ठाकुर जी विराजमान होकर सभी प्राणियों को दर्शन देते हैं। सूर्य प्रभा के दर्शन करने से मनुष्य आरोग्य प्राप्त करता है तथा सभी बन्धनों से छूटकर ठाकुर जी की शरण में आ जाता है।

**हंस वाहन—**

दूसरे दिन सायंकाल के समय ठाकुर जी हंस के वाहन में विराजमान होकर सभी को अलौकिक दर्शन देते हैं। इस झाँकी के दर्शन मात्र से मनुष्य के मन में निर्मलता का भाव जाग्रत हो जाता है।

**गरुड़ वाहन—**

ब्रह्मोत्सव के तीसरे दिन अर्थात् चैत्र मास कृष्ण पक्ष चतुर्थी को प्रातःकाल की बेला में सोने से बने हुए गरुड़ के वाहन पर ठाकुरजी की सवारी निकलती है। इस सवारी के दर्शन से मनुष्य भक्ति की ओर उन्मुख होता है।

**हनुमान जी की सवारी—**

सवारी के तीसरे दिन सायंकाल की बेला में स्वर्ण निर्मित हनुमान जी अपने कन्धे पर मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी को विराजमान करके नगर भ्रमण को निकलते हैं। इस सवारी के दर्शन से जनमानस को अत्यन्त आनन्द की अनुभूति होती है। आज ही के दिन छोटी आतिशबाजी का आयोजन होता है तथा जनमानस का बहुत बड़ा समूह इसे देखने के लिये पहुंचता है। इसमें अनेक प्रकार की आतिशबाजी का प्रदर्शन किया जाता है।

**श्री शेष जी—**

श्री रंग मंदिर में चल रहे ब्रह्मोत्सव के चौथे दिन रजत निर्मित शेष जी पर प्रभु की सवारी भक्तों को आनन्दित करती है।

**कल्प-वृक्ष—**

इसी दिन सायंकाल की बेला में प्रभु श्रीकृष्ण के रूप में बाँसुरी हाथ में लिये कल्प वृक्ष पर विराजमान होकर श्रद्धालुओं को दर्शन देते हैं।

**पालकी—**

कल्पवृक्ष के अगले दिन अर्थात् पाँचवें दिन पालकी में विराजमान होकर सवारी निकलती है। इस दिन ठाकुरजी मोहिनी रूप में विराजमान होकर जनमानस को दर्शन देते हैं।

**सिंह शार्दूल—**

पाँचवें दिन के सायंकाल की बेला में प्रभु सिंह शार्दूल पर विराजमान होकर भक्तों को दर्शन देते हैं। यह अनोखा दृश्य देखकर मन में शान्ति का अनुभव होता है।

**काँच का विमान—**

ब्रह्मोत्सव के छठे दिन प्रभु काँच के विमान में बैठकर अबीर गुलाल से होली खेलते हुए भक्तों को अपने रंग में रंगते हुए चलते हैं।

**हाथी की सवारी—**

इसी दिन सायंकाल के समय सोने के हाथी पर सवार होकर प्रभु भ्रमण के लिये निकलते हैं।

**रथ की सवारी—**

दस दिवसीय ब्रह्मोत्सव का प्रमुख आकर्षण रथ की सवारी है। लगभग 40 फुट ऊंचे चन्दन की लकड़ी से बने रथ में श्रीगोदारंगमन्नार प्रभु चैत्र कृष्ण नवमी को विराजमान होकर दर्शन देने के लिये पधारते हैं। यह दृश्य अत्यन्त लुभावना होता है। रथ को भारी-भरकम मोटे-मोटे रस्सों के सहारे श्रद्धालुओं द्वारा खींचा जाता है। रथ की सवारी मन्दिर से चलकर बड़े बगीचे तक जाती है। इस देखने के लिये श्रद्धालु दूर-दूर से आते हैं। प्रात:काल रथ बड़े बगीचे जाता है तथा सायंकाल में लौटकर मंदिर में आते हैं। लोग यह मेला देखने के लिये अपने सगे-सम्बन्धियों को आमन्त्रित करते हैं तथा रिश्तेदारों के साथ मेले का आनन्द उठाते हैं।

**रंगीन फव्वारों का आयोजन—**

रथ की सवारी के मंदिर में लौटने के पश्चात रंगीन फव्वारे चलाए जाते हैं। जिसकी छटा देखते बनती है।

**घोड़ा पर सवारी—**

ब्रह्मोत्सव के आठवें दिन सायंकाल के समय प्रभु हाथ में रजत निर्मित भाला लिये स्वर्ण के डोले में विराजमान होकर अपने भक्तों को दर्शन देते हैं।

**बड़ी आतिशबाजी—**

इसी दिन घोड़े पर विराजमान ठाकुर जी की सवारी के बड़े बगीचे पहुँचने के पश्चात आतिशबाजी का रोमांचकारी प्रदर्शन प्रारम्भ होता है। जिसे देखने के लिये अनेक श्रद्धालु वहाँ आते हैं।

**परकाल स्वामी लीला—**

इसी दिन सवारी जब मंदिर में आती है तो परकाल लीला का आयोजन किया जाता है।

**पालकी में सवारी एवं यमुना स्नान मनोरथ—**

ब्रह्मोत्सव के नवें दिन पालकी में विराजमान गोदारंगमन्नार भगवान यमुना स्नान हेतु जाते हैं। इसलिये इस सवारी का आयोजन किया जाता है।

**चन्द्र प्रभा—**

ब्रह्मोत्सव के दसवें दिन प्रिया-प्रियतम शीतलता के प्रतीक चन्द्र वाहन में दर्शन देते हैं। इस स्वरूप के दर्शन मात्र से मन में दिव्य शान्ति प्राप्त होती है।

**पुष्प विमान —**

ब्रह्मोत्सव के समापन के अवसर पर रात्रि में पुष्प विमान पर प्रभु की सवारी का आयोजन किया जाता है। जिसमें नाना प्रकार के पुष्पों से विमान को सुसज्जित किया जाता है।

# संदर्भ ग्रंथ


1. ब्रज लोक संस्कृति – सं. डॉ. उमाशंकर दीक्षित
2. व्रत और त्योहार – सं. डॉ. शान्ति जैन
3. ब्रज के लोक-मंगल का संसार – सं. विद्यानिवास मिश्र
4. हनुमदुपासना कल्पद्रुम
5. श्री श्याममोहन मासिक पत्रिका – सं. श्री अच्युतानन्ददास
6. सेवा ऋतु उत्सव मनोरथ – सं. गोस्वामी शरद
7. इन्साफ सप्ताहिक पत्रिका – सं. आचार्य महेश भारद्वाज
8. व्रत और त्योहार : पौराणिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि – सं. डॉ. शान्ति जैन
9. ब्रज के उत्सव, त्योहार और मेले – सं. प्रभुदयाल मीतल
10. वृन्दावन संदेश त्रय मासिक पत्रिका – सं. श्रीमती डॉ. हर्षनन्दिनी भाटिया
11. सेवा ऋतु उत्सव और मनोरथ – सं. गोस्वामी श्याम मनोहर
12. पुष्टिमार्गीय कीर्तन सेवा – सं. रवि प्रभा वर्मन
13. व्रत चन्द्रिका – सं. पं. रामजीलाल शास्त्री
14. ब्रज की लोक कलाएँ – सं. डॉ. विमला शर्मा
15. वृन्दावन के प्रमुख पर्व-उत्सवों में प्रचलित पारम्परिक गीतों का संगीतिक अध्ययन (शोध प्रबन्ध)
16. सेवा – सं. गोस्वामी श्याम मनोहर
17. ब्रज सलिला – वृन्दावन शोध संस्थान की पत्रिका

## सूचना स्रोत

18. विभिन्न मन्दिरों से प्राप्त सूचना प्रपत्र
19. दैनिक जागरण समाचार पत्र
20. दैनिक समाचार पत्र अमर उजाला
21. दैनिक समाचार पत्र हिन्दुस्तान
22. श्री रंगनाथ मन्दिर का पंचांग

## साक्षात्कार

23. श्री जगदीश शर्मा गुरुजी, वृन्दावन
24. श्री राधाश्याम सुन्दर मन्दिर के सेवायत
25. द्वारकाधीश जी मन्दिर के सेवायत
26. गंगा मन्दिर के सेवायत
27. सप्त देवालयों के सेवायत
28. श्री बाँके बिहारी मंदिर के सेवायत
29. श्री शाह जी मन्दिर के सेवायत
30. मथुरा के गणेश टीला मंदिर के सेवायत
31. वृन्दावन के मोटे गणेश मन्दिर के सेवायत
32. श्री राधावल्लभ मन्दिर के सेवायत

वृन्दावन शोध संस्थान
रमणरेती मार्ग, वृन्दावन-२८११२१